भगवत् कृपा

साकार प्रगट ब्रह्म को जो पहचाने, वो परम् को पाये

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली द्विमासिक सत्संग पत्रिका

निजात्मानं ब्रह्मरूपं देहत्रयविलक्षणम् । विभाव्य तेन कर्तव्या भक्तिः कृष्णस्य सर्वदा ॥ शिक्षापत्री, ११६

वर्ष 34 अंक : 1	29.1.2011 शनिवार (जनवरी – फरवरी)	शुल्क – प्रति अंक : ₹ 10.00 वार्षिक : ₹ 50.00

साक्षात्कार की हीरक जयंती वर्ष के प्रारंभ की 'तीन फरवरी' पर...

1952 की वह मंगलकारी 3 फरवरी – जब गुरुहरि योगीजी महाराज ने प.पू. काकाजी को अपने अंतस की प्रसन्नता के फलरूप महाराज का सम्यक् दर्शन करवाया और अपने सच्चे स्वरूप की पहचान करवाई। इस साक्षात्कार के बाद प.पू. काकाजी ने जोर-शोर से प.पू. योगीजी महाराज की - प्रत्यक्ष स्वरूप की पहचान का उद्घोष शुरु किया... सुहृद्भाव का धोध बहाया... आत्मबुद्धि और प्रीति के सच्चे सत्संग की शुरुआत की और ऐसे समाज को व्यापक बनाया... कसनी की भक्ति को प्रवर्ता कर अखंड अक्षरधाम में रहने की एक सूझ दी! भव्यस्वरूप के सम्यक् दर्शन के बाद, उन्हें हर एक व्यक्ति-पदार्थ-प्रसंग या शक्ति में एक 'तू ही-तू' है ऐसा सहज ही रहा। सो, अभाव-अवगुण या किसी की बुराई देखने की बात ही उड़ गई। इतना ही नहीं, बल्कि **'अभाव-अवगुण में पड़ना'** – यह **महापाप** है, ऐसा संबंध में आए अन्यों को भी मनवा दिया। **'केवल प्रगट स्वरूप ही कर्ताहर्ता हैं'** – ऐसी दृढ़ता स्वयं की और अन्यों को करवा कर अक्षरधाम के दिव्य समाज का प.पू. काकाजी एवं प.पू. पप्पाजी – दोनों भाइयों ने धरती पर सर्जन किया।

और... इस दिन को हम **प.पू. पप्पाजी** के शब्दों में **'विजयदिन' के रूप में मनाते रहे हैं – मनाते रहेंगे।** क्योंकि – प्रकृति टल गई... प्रकृति-पुरुष तक के संकल्प विलीन हो गए... लिंग देह पिघल गया... स्वभाव स्वरूप का स्वभाव बना... अक्षरधाम के धामी की अखंड प्रेरणा का धोध शुरू हुआ... और इसी कारण अक्षरधाम का सनातनज्ञान साकार हुआ। जीवकोटि, ईश्वरकोटि या पुरुषकोटि के लिए जो दर्शन अशक्य था, जो ज्ञान अशक्य था, जो दिव्यजीवन अशक्य था, वह ज्ञान और जीवन साकार हुआ। फलस्वरूप आज लाखों मुमुक्षुओं के लिए अक्षरधाम का दिव्यजीवन सहज एवं सरल हो गया!

आध्यात्मिक विकास की पूर्णाहुति की ओर हम त्वरित गति से अग्रसर हो सकें, इस हेतु प्रभु द्वारा पसंद की हुई दिव्य विग्रह विभूतियाँ, मानवदेह में

अवतरित होकर सहजावस्था में शास्त्र के सनातन, फिर भी क्लिष्ट ज्ञान का मर्म खोल देती है। उसका मनन-चिंतन करने पर परमतत्त्व की अनुभूति अवश्य होती है और नीरव शांति का आनंद प्राप्त होता है।

आइए, **परमतत्त्व की ऐसी अनुभूति** एवं **परमानंद** प्राप्त कराती प.पू. काकाजी की निम्न परावाणी के एक-एक शब्द की गहनता को अंतर में धारते हुए सच्ची '**3 फरवरी**' मनाएँ...

प्राणीचेतना की ऊर्मि और भावनाप्रधान क्रियायोगों में से **बुद्धि से नियंत्रित रहता हुआ प्राणी – यानि मानवचेतना !**
आत्मसाक्षात्कार या देवता एवं अवतार के साक्षात्कारों से प्राप्त स्व-स्वरूप के ज्ञान से युक्त
भक्त, मुक्त और संत अपने-अपने अनुभव एवं क्रियायोगों से
प्रभु की प्रसन्नता के लिए
निष्कामभावना से जो कुछ प्रवृत्ति या निवृत्ति करते रहते हैं, उसे 'नैष्कर्म्यसिद्धि' या 'सत्कर्म' माना जाता है।
ऐसी पूर्णता की सोच मूर्तिमान है, फिर भी संपूर्ण नहीं है और वहाँ **ब्रह्मनिर्वाण** है, लेकिन **ब्रह्मस्वरूपता** नहीं है।
ऐसे सापेक्ष साक्षात्कार
प्रभु के असली स्वरूप के साथ के संपूर्ण और सर्वांगीण साक्षात्कार में परिणीत नहीं होते।

'अक्षरमत' के मुताबिक–

गुणातीत के –ब्रह्म के साधर्म्य को प्राप्त करना–यह उसके लिए अनिवार्य शर्त कहो या दिव्यनियम है।
श्रीजी महाराज ने वचनामृत लोया 7 में वेद, उपनिषद्, गीता के परम रहस्य के रूप में शुकदेवजी के दृष्टांत से
बहुत स्पष्ट बताया कि ऐसे ब्रह्मस्वरूप संत हुए बिना–ब्रह्मस्वरूप की ऐसी स्थिति प्राप्त किए बिना,
साक्षात् परब्रह्म सेवा स्वीकार करते नहीं–उनकी सेवा का अधिकार मिलता नहीं।

प्रभु की कृपा के बिना प्रगट की निष्ठा होनी संभव ही नहीं।

जिन्हें केवल प्रभु ही चाहिएँ, उनके लिए आत्यंतिक कल्याण का – आख़िरी जन्म कर लेने का
यानि – निर्वासनिक और स्वभावरहित होकर, परब्रह्म में जुड़ जाने के लिए
गुणातीत ने प्रारंभ एवं अंत में भी
'**स्वरूपानुभूति वाले संत**' को ही अंतिम और एक एवं अद्वितीय द्वार बताया है।
ऐसे **संत के वचन से स्वरूप की पहचान होने पर** वच. कारियाणी 12 के मुताबिक
जीव की मूलवृत्ति की कणी पिघल कर 'कारण शरीर' टलने पर '**मुक्तचेतना**' में प्रवेश मिलता है
और... वह जीवनमुक्त बनता है।
श्रीजी महाराज ने वच. जेतलपुर 1 में स्वप्रयत्न से चाहे कितने ही–अनंत साधन करने के बावजूद,
सुषुप्ति की माया से भी अधिक, '**साम्यावस्थारूपी माया**' को टालना अशक्य और नामुमकिन बताया है।
पर, गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज और संतवर्य योगीजी महाराज ने श्रेयार्थी साधकों के लिए
अक्षरब्रह्म की अनिवार्यता की परम रहस्यमयी एवं गोपनीय बात
बिल्कुल सरल और सुगम बना कर अखंडित रख दी है।
इस हेतु भगवत्संबंध से **हेतनिष्ठा** और **ज्ञाननिष्ठा** सिद्ध होते ही

सुहृद्भाव के परम सिद्धांत से **माहात्म्यनिष्ठा** सिद्ध करनी ही पड़ती है।
तब ही दिव्य दृष्टि प्राप्त करके **'दिव्यचेतना'** में प्रवेश कर सकते हैं और यह है – अनंत जीवन की अमरता।
नारायण की सच्ची सेवा के अधिकारी तभी बन पाते हैं।
ऐश्वर्य, शक्ति और सिद्धि के साक्षात्कारों की अपेक्षा ब्राह्मीस्थिति का यह साक्षात्कार संपूर्ण होता है।
यह है डिवाईन कॉन्सियसनेस का परब्रह्म के साथ का पूर्णयोग!
इस हेतु संबंध वाले भगवदी के साथ सौहार्द रख कर उन्हें 'ब्रह्म की मूर्ति' मान कर
निर्मानी रहते हुए एवं साधुता रखते हुए अभीप्सा रखेंगे,
तो सैद्धांतिक प्रसन्नता मिलती है एवं **'वासुदेवः सर्वमिति' की पुरुषोत्तम रूप दृष्टि** प्राप्त होती है।
भगवान और संत मिले, उन्हें माना-पहचाना और निर्दोषबुद्धि से हम जीवन भी जीते हैं,
फिर भी, अक्षरधाम रूप बनने के लिए और जीतेजी परम सुखी होने के लिए
कसनी की एवं निषेध की भक्ति से महिमा का यह साक्षात्कार करना ही पड़ता है।
यहाँ हमें ही अपना गुरु बन कर साधना, साध्य और साधन का एकीकरण करना पड़ता है।
और... इस हेतु संजीवनी मंत्र के रूप में,
'माहात्म्य ज्ञान से युक्त कसनी की भक्ति' व 'आध्यात्मिक सत्कर्म' साधन है।
पहले कहे के मुताबिक ऐसे ज्ञानीमुक्त प्रभु की प्रसन्नता के लिए क्रियायोग तो करते ही हैं,
और आनंदमय कोश भी उन्हें सहज सिद्ध होता है, परंतु, तब भी वो पूर्णता नहीं है।
जबकि, इस अक्षरमत के मुताबिक–
'स्व का संपूर्ण विसर्जन या मैं ब्रह्मरूप हूँ' – इस कॉन्सियसनेस का भी विसर्जन शक्य बनता है और तभी परब्रह्म का अखंड निवास होता है।
सत्कर्म में अपने व्यक्तित्व की कॉन्सियसनेस रहती है। कनिष्ठ मुक्त की यह कक्षा है।
दूसरी ओर – उत्तममुक्तों में अक्षर के साथ के साधर्म्य से अभेदभाव आने पर
केवल परब्रह्म की परात्परता का स्वामीसेवकभाव रहते हुए
अद्वितीय एकता – 'मद्भावमागताः या निरज्जनः परमं साम्यमुपैति' के मुताबिक
केवल महाराज को धारण करने की ब्राह्मीस्थिति प्राप्त होती है।
स्वरूपज्ञान का साक्षात्कार होने के बाद महिमा के इस साक्षात्कार से
ऐसे मुक्त अत्यंत धीरज, सरलता, नम्रता और केवल दिव्यप्रेम से
जीव को ब्रह्मरूप करके परब्रह्म में जोड़ने की ही प्रवृत्ति करते रहते हैं।
वे दीप स्तंभ के रूप में वर्त कर पल-पल अपने आश्रितों के मूल अज्ञान को टालते हुए
उन्हें कदम-कदम पर पूर्णता की ओर अग्रसर करते रहते हैं।
यहाँ **'आध्यात्मिक सत्कर्म'** तत्काल फल देता है।
इससे, निर्विचार कहो या निर्विकार या निराधार और निराकार अवस्था में

केवल प्रभु ही रोम-रोम में संपूर्ण प्रगट रहते हैं।
ऐसी ब्राह्मीस्थिति की संपूर्णता–
जैसी गुरु गुणातीत की थी और प.पू. योगीजी महाराज में भी हमें सहज ही अनुभव हुई ,
वही आध्यात्मिक विरासत ऐसे संतों-मुक्तों को उन्होंने बख़्शिश दी है।
तो हम भी उनके बल से उनकी ही राह पर चलें।
और... उनकी कृपा से ऐसे दिव्य गुण हम में सहज बने,
इस हेतु निम्न रीत से '**आध्यात्मिक सत्कर्म**' करते रहें।
सत्कर्म निर्गुण और निष्कामभाव वाला है, लेकिन वहाँ भक्त और भगवान के बीच में तादात्म्य का अभाव रहता है।
जबकि – 'संत मेरी आत्मा' और उनसे ऐसा तादात्म्य पाकर विशिष्टाद्वैत को धारण करने की कला
महिमा का साक्षात्कार होने पर प्राप्त होती है।
तो, सत्कर्म – कि जिसकी शुरुआत साक्षीभाव से होती है और जो उसकी अनिवार्य शर्त गिनी जाती है,
उसका आरंभ करने –
ऐसी **दिव्यचेतना वाले संत को अपनी आत्मा-आधार मान कर, उनसे ऐक्य साध कर**
प्रभु के **संबंध वाले मुक्तों में** – भगवदी में सुहृद्‌भाव रखना पड़ता है।
उनकी क्रिया और स्वभाव को नज़र में न लेकर,
उद्धवजी की भाँति, केवल प्रभु का संबंध ही दिव्यदृष्टि से देखना पड़ता है।
थोड़ा धीरज रखेंगे तो वहाँ सचेतन-साक्षीभाव से केवल प्रभु की ही लीला का दर्शन होगा।
फिर जो कुछ होता होगा, वह सब प्रभु ही कर रहे होते हैं।
वृत्तियों की निर्मूलता के बाद का यह पहला आध्यात्मिक सोपान है।
दूसरी शर्त **समकक्षा के मुक्तों के साथ** की है।
जब महाराज ही मुक्तों में कार्य कर रहे होते हैं
और... हमारी कसर रह गई हो, उसे निकालने के लिए कई बार, उन्हें निमित्त बना कर प्रसंग योजित करते हैं,
तब सचेतन साक्षीभाव रख कर इनके क्रियायोगों में सलाह – मशवरा देते हुए
उनकी रुचि में जुड़ जाना, ताकि किसी प्रकार का द्वंद्व ही खड़ा रहेगा नहीं।
यह ज्ञानावस्था की स्थिरता की एक भूमिका है।
और... आख़िर में **अपने आप के लिए** प्रभु की सहज प्रेरणा से जो कुछ बन सके
वह अहोहोभाव से यज्ञरूप करते हुए
समग्र सत्संग को दिव्य मान कर उस क्रिया या कर्म का फल प्रभु को अर्पण कर देना
और प्रभु की ऐसी सचोट प्रेरणा या संत के वचन से, पूरी उमंग से
सक्रिय बन कर सत्संग में संबंध वालों के साथ घुलमिल जाना।
उसमें **दूसरे जुड़ें या न जुड़ें, लेकिन हम तो प्रभु से वफ़ादारी रखते हुए कार्य करते रहें।**

तब वहाँ भी प्रभु ही सत्यसंकल्प को मूर्तिमान करते लगेंगे

और

जिन्हें हमने अपना दृष्टा माना है – पूज्य माना है, उनके पास किसी भी प्रकार का 'लेकिन – तो' नहीं रहेगा।

ऐसे आध्यात्मिक सत्कर्म के फलरुप अखंड शांति, सुख, आनंद और अमाप शक्ति प्राप्त होगी।

यह है प्रभु का सच्चा दिव्य साक्षात्कार!

यहाँ केवल **परमानंद** ही है और उसके संबंध में आने वाले भी

ऐसे ही सुख, शांति, आनंद और शक्ति को प्राप्त करते जाते हैं।

स्वरूप की स्मृति, एकांतिक की अनुवृत्ति और संबंध वालों से मेलजोल का

दिव्य साक्षात्कार सुहृद्‌भाव के सिद्धांत से सभी को प्राप्त हो यही गुरुचरणों में प्रार्थना।

– 1972 में प.पू. काकाजी द्वारा की कथावार्ता में से...

✡✡✡

सत्संग में वसंत के आगमन पर...

वसंत ऋतु आते ही बाग-बगीचों में तरह-तरह के पुष्प खिल उठते हैं। पूरा माहौल खुशनुमा दिखाई देता है और अंतर में भी सुकून मिलता है। यूँही , मानो अपने आश्रित जीवों की हर प्रकार से रक्षा करके सदैव प्रफुल्लित रखने हेतु **वसंतपंचमी** के शुभदिन 1882 में श्रीजी महाराज ने **शिक्षापत्री** दी। तन, मन, धन और आत्मा से सुखी रहने के उपाय मानो श्रीजी महाराज ने शिक्षापत्री के 212 श्लोकों द्वारा बता दिए हैं।

शिक्षापत्री का प्रारंभ करते हुए **श्रीजी महाराज** ने कहा –

'मैं सहजानंदस्वामी अपने सत्संगी के लिए शिक्षापत्री लिखने से पूर्व अपने ईष्ट देव श्रीकृष्ण का ध्यानरूप मंगलाचरण करता हूँ...'

स्वयं अवतारों के अवतारी, फिर भी शिक्षापत्री लिखने से पहले उन्होंने अपने आराध्यदेव का ध्यानरूप मंगलाचरण किया! दरअसल, श्रीजी महाराज समझाना चाहते हैं कि हम भले ही कितने ही बड़े हो जाएं, परंतु किसी भी क्रिया को करने से पहले अपने प्रभु को आगे रख कर फिर कदम बढ़ाएँ।

गुरुहरि काकाजी महाराज कहते –

प्रभु के नाम का नमक डाल कर सारी क्रियाएँ करो।

ब्रह्मस्वरूप पप्पाजी महाराज कहते –

प्रथम प्रभु, पछी पगलुं (फिर कदम बढ़ाना)...

अपने जॅस्चर्स द्वारा भी इसी राह पर चलने का इन्होंने मार्गदर्शन दिया है।

अक्षरपुरूषोत्तम के उपासकों के लिए तो '**वचनामृत**', '**शिक्षापत्री**' और '**स्वामी की बातें**' ये तीन सर्वोत्तम ग्रंथ हैं। **इनके अतिरिक्त अन्य किसी ग्रंथ को पढ़ने की यदि हमें चाह रहती हो , तो कहीं न कहीं वह हमारा मोह है।** क्योंकि इनसे ऊपर कोई ज्ञान ही नहीं है।

'**ब्रह्मरूप होकर परब्रह्म की भक्ति करना**' – यही जब मानवजीवन का अंतिम लक्ष्यबिंदु है, तो क्यों न इस सनातन सत्शास्त्र को प्रगट सत्पुरुष द्वारा यथार्थ समझ कर हम वर्तें – यही शिक्षापत्री जयंती पर प्रार्थना!

साथ ही अत्यधिक आनंद की बात यह है कि 'अक्षरपुरूषोत्तम' की युगल उपासना के प्रवर्तक गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज का प्राकट्य भी वसंतपंचमी के मंगलकारी दिन हुआ और... मानो **स्वामिनारायण संप्रदाय में 'वसंत' प्रगटी!** उनके प्रागट्य दिन निमित्त ऐसी विभूतियों के जीवन - उपदेश - प्रसंगों की न केवल स्मृति करें, बल्कि उनका **'मर्म' समझते हुए** उस राह पर अग्रसर हों – ऐसी वसंतपंचमी के पावन पर्व पर प्रार्थना...

कैसा मर्म ? जैसे – महाराज की हाज़िरी में 'करमड' गाँव में अन्नकूट उत्सव हुआ था। महाराज ने संतगण को स्वयं भोजन परोसने का संकल्प किया। संतगण गुट बना कर अलग - अलग गुटों में बैठा था।

दरअसल महाराज ने जिन मंदिरों का निर्माण किया था, उनमें जो मूर्तियाँ पधराई थीं, उनके नाम से ये गुट पुकारे जाते थे। जैसे कि – नरनारायणी गुट, लक्ष्मीनारायणी गुट, राधारमणी गुट – यूँ पहचान बन गई थी।

सो, महाराज ने **मर्म में** पूछा – ***इनमें फिर स्वामिनारायणी कौन ?*** यह प्रश्न सुनते ही सब की आँखें खुल गईं! **तुरंत ही अपनी गलती के लिए सभी ने क्षमायाचना की।** सद्. मुक्तानंदस्वामिजी बोले – *प्रभु!* ***हम सभी स्वामिनारायणी ही हैं और हमारी पहचान भी वही रहेगी।***

तब **महाराज** ने हँस कर कहा –

'अलग - अलग गुटबंदी से आपके मन एक - दूसरे से अलग हो जाएँगे। इससे हमारी संघनिष्ठा प्रतिदिन टूटती जाएगी। जैसे साधु पहचाने जाएँगे, वैसे हरिभक्त भी पहचाने जाएँगे। * हमने जो युगल मूर्तियाँ पधराईं हैं, इसका रहस्य यही है कि मूर्ति चाहे जिसकी भी हो – 'ब्रह्मरूप होकर परब्रह्म की भक्ति करना' ही हमारी (भक्त सहित भगवान की युगल) उपासना है।'

इसी रहस्य को **मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंद-स्वामिजी** ने अपनी बातों में वच. ग. प्र. 5 का जिकर करते हुए उजागर किया है – *'महाराज ने राधिका सहित जो श्रीकृष्ण का ध्यान करने के लिए कहा है, वह तो – महाराज को भक्तसहित भगवान का ध्यान - भजन करवाना है।' (स्वामी की बातें – प्र. 11, 96)*

ब्रह्मस्वरूप स्वामीश्री शास्त्रीजी महाराज ने इसी **मर्म** को पकड़ कर अक्षरपुरुषोत्तम की युगल उपासना के मंदिर बनवाए और... ब्रह्म - परब्रह्म की तत्त्वनिष्ठा को मूर्तिमान किया। यूँ श्रीजी महाराज की रीति - नीति के मर्म को समझ कर ही गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज वर्ते हैं।

श्रीजी महाराज ने वच ग.म. 28 में कहा है – *'भगवान का जो सच्चा भक्त है, उस भक्त का मैं भक्त हूँ...'* इसी सिद्धांत से गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज बोचासण के एकदम सामान्य भक्त के लिए भी कहते – *'इस धूळा भगत की महिमा समझोगे, तो मेरी महिमा समझी मानी जाएगी। और... भगवान के भाव से उसे भोजन करा कर कपड़े दोगे, तो वह सेवा मुझे पहुँचेगी।'* इससे भी अधिक, वे कहते –

'गुरु की सेवा तो सभी करेंगे, लेकिन अति अल्पबुद्धि वाला, ऐसा - वैसा कोई सेवक हो, उसकी सेवा करें, वही सच्ची सेवा है।'

---

* **गुणातीत समाज के हम भी अलग - अलग प्रवाहों में न बंट जाकर, एक संघनिष्ठा से जीएं और इस हेतु गुणातीत समाज के आद्य सर्जक – प.पू. काकाजी और प.पू. पप्पाजी को कभी भूलें नहीं – गौण करें नहीं।**

एक बार संतगण बदलपुर गाँव में पहले पहुँच गए थे। वहाँ के हरिभक्तों के मन में ऐसा भाव आया कि जब शास्त्रीजी महाराज आएंगे, तब पक्का भोजन कराएंगे। और... इस दौरान उन्होंने इन संतों को रोटी-खिचड़ी जैसा सादा भोजन कराया। तीन दिन के बाद शास्त्रीजी महाराज वहाँ पधारे। हरिभक्तों ने शास्त्रीजी महाराज से कहा – *'बापा, हम आपकी राह देख रहे थे कि आप कब आएँ और आपको पक्का भोजन दें।'* तब शास्त्रीजी महाराज ने पूछा – *'संतों को क्या खिलाया था?'* वे बोले – *'रोटी - खिचड़ी इत्यादि।'* यह सुनते ही शास्त्रीजी महाराज बोले – *'मुझे तुम्हारा भोजन नहीं खाना। मेरे संतों में रह कर मैं ही खाता हूँ।'* ऐसा कह कर उन्हें खूब डाँटा।

गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज ऐसे चरित्र द्वारा यही दर्शाना चाहते थे कि भगवान के संबंध वाले हर एक हरिभक्त की मन, कर्म और वचन से महिमा सहित सेवा करना ही भगवान को राजी करने का श्रेष्ठ उपाय है।

तो आओ, ब्रह्मस्वरूप स्वामीश्री शास्त्रीजी महाराज की रीति को अपनाते हुए जीने की प्रार्थना के साथ हम उनका **प्राकट्य दिन – वसंतपंचमी** मनाएँ।

✡✡✡

आया अमृतपर्व 'अक्षर के तेज' का...

जिनके प्रत्येक

☆ साँस की पवित्रता-निर्दोषता

☆ धड़कन का धैर्य

☆ रोम-रोम में अप्रतिम विवेक

☆ कदम का सौजन्य

अपने आश्रितों की तन, मन, धन और आत्मा की उन्नति कराने के लिए निरंतर गतिशील है, ऐसे 'अक्षर के तेज' संतवर्य **प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी का अमृतपर्व, 15 फरवरी 2011** के मंगलकारी दिन श्रीजी महाराज के प्रसादी के गाँव 'सांकरदा' में मनाएँगे। इन्होंने 11 मई 1961 में गुरुहरि योगीजी महाराज के वरद् हस्तों भागवती दीक्षा ली और... 'योगी' की चुन्नी जब से ओढ़ी, तभी से अपनी अजोड़ साधुता से 'साधु की पदवी' को सुशोभित कर रहे हैं!

स्वयं साक्षात् स्वरूप होने के बावजूद, प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी, प.पू. साहेब व प.पू. हरिभाई साहेब के साथ दासत्वभाव से वर्ते हैं। साथ ही साथ, योगीजी महाराज की जीवनशैली का अनुसरण करते हुए, छोटे से छोटे अल्प संबंध वाले को भी अपने गुरु का स्वरूप मान कर ही वर्तते हैं। यूं, योगीजी महाराज की माहात्म्यभरी दासत्वभक्ति अपने रोम-रोम में प्रगटा कर दासत्वभक्ति का मूर्तिमान स्वरूप बने हैं! ऐसी दिव्य विभूति को अनंत भाववंदना जिन्होंने अपने गुरु के गुण प्राप्त किए। सच, जो सदैव 'अक्षर' में ही विहार करता है, वही सभी का दास बन सकता है न!

जो पारस से पारस बनाए उसे '**सिद्धसंत**' कहा जाता है। सिद्धदशा की ऐसी अलमस्ती का दर्शन हमें आज प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी में अंखड होता है। **गज़ब की संकल्पसिद्धि सहज होने के बावजूद, सदैव 'नीरव' एवं प्रगट प्रभु के दासानुदास रहते हुए, संबंध में आए सभी को आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग पर ले जाने का ही एक मात्र ध्येय लिए वे कार्यरत हैं!** इससे भी अधिक, गुरुहरि के संबंध वाले सभी की हर प्रकार से सेवा की है – करते हैं;

सेवा का तो उन्हें रसिया ही कहना चाहिए। कैसा अद्‌भुत जीवन! कैसा उनका दासभाव और कैसी उनके जीवन में गुरु के वचन की महिमा वह निम्न छोटे प्रसंग से प्रतीत होती है…

प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी जब दादर मंदिर में रहते थे, तब सब नए-नए युवक साधु हुए थे। संतों को महीने की हर शुक्ला त्रयोदशी के दिन मुंडन करवाना अनिवार्य होता था। योगीजी महाराज के प्रति लगाव के कारण वे सभी युवक साधु हुए थे। भीतर में वैराग्य की इच्छा तो किसी को थी ही नहीं। इसलिए भले बाहरी जगत तो छूट गया, लेकिन मन के बवंडर में फँस कर उन्हें परेशानी भी होती। ऐसी परेशानी के कारण एक संत ने मुंडन करवाने के लिए मना कर दिया। उसे किसी की बात स्वीकार नहीं थी, लेकिन प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी की बात स्वीकार्य होती थी। वैसे भी प.पू. अक्षरविहारी-स्वामिजी कहते हैं– *'गुणातीत पुरुष के अभिप्राय की भक्ति में जुड़ जाएँ, वही बड़े से बड़ी सेवा है'*; सो वे बापा का अभिप्राय जान कर सेवा की भावना से संतों को खूब संभालते थे। उन्हें जिस चीज की आवश्यकता होती, वह सब देते। साथ ही उन्हें यह ख्याल था कि स्वामीबापा ने दीक्षा दी है, तो आंतरिक कार्य तो बापा ही करवाने वाले हैं; लेकिन साधु के कपड़ों में उन्हें टिकाए रखने के लिए प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी लगे ही रहते। सो, उस साधु को उन्होंने खूब समझाया-गोष्ठि की। आख़िर लगाव के कारण उसने 'हाँ' कर दी और मुंडन करवाने के लिए तैयार हो गया। रात के दस बजे थे। सो, उस संत का मुंडन करवाने के लिए नाई की कई दुकानों पर भी घूमें, परंतु रात होने के कारण किसी भी नाई ने 'हाँ' नहीं की। खूब घूम कर रात को करीब एक बजे मंदिर पहुँचे। दादर मंदिर के नीचे गेरेज में आकर स्वामिजी ने मुंडन करने का सारा सामान मंगवाया और कहा– *'लाओ, मैं कर देता हूँ।'* यूं कह कर उन्होंने मौके की सेवा लूट ली और मुंडन कर दिया।

स्वामीबापा की रुचि और अभिप्राय था संतों को संभालना। संतों को टिकाना, वह हमारी सर्वोत्कृष्ट सेवा मानी जाए। ऐसी सेवा का माहात्म्य समझते हुए वे छोटी से छोटी सेवा करने को भी तत्पर रहते! कैसी दासत्वभक्ति!

और तो और, प्रभुधारक संत होते हुए भी निरंतर एक साधक की दृष्टि से जीते दिखाई देते हैं। एक बार प.पू. पप्पाजी सांकरदा के गेस्ट रूम में बैठे थे। प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी से सहज ही पूछा– *'तुझे क्या चाहिए?'* तो स्वामिजी बोले– *'लौकिक-अलौकिक रूप से तो मैं सब जगह पहुँच जाऊँगा। केवल आध्यात्मिक भूमिका का काम आप करना।'*
प.पू. पप्पाजी राजी होकर एकदम बोले– *'तू इन सभी संतों और युवकों को आनंद में रख-संभाल। तेरी सारी ही आध्यात्मिक जिम्मेदारी मेरे माथे।'*

प.पू. पप्पाजी तो एक बार संतों को परभाव में यह भी बोले– *'ये स्वामिजी जबरदस्त माहात्म्य सम्राट हैं; चौबीस घंटे मुझे धार कर जीते हैं।'*

माहात्म्य सम्राट के अमृतपर्व पर यही प्रार्थना कि गुरुहरि योगीजी महाराज के अभिप्राय की भक्ति करते हुए, ब्रह्मस्वरूप **काकाजी महाराज एवं पप्पाजी महाराज** ने जिस **'योगी परिवार'** का सर्जन किया, उसके हम सदस्य हैं; सो, आपकी भाँति हम प्रगट स्वरूपों के अभिप्राय की भक्ति को अपना जीवन बनाने के लिए तत्पर हों– ऐसे वे आशिष प्रदान करें!

✡✡✡

सौरभ - २५

સ્વામિશ્રીજી

પ.પૂ. ગુરૂજીના દર્શન મને પ્હેલી વાર ૧૯૮૬માં થયા. પૂ. પ્રમિતભાઈ મને અને પૂ. વિજયભાઈ (મારા મોટાભાઈ)ને મોડી રાત્રે એ-૧૦૩ વાળા (જૂના) મંદિરમાં પ.પૂ. ગુરૂજીના દર્શને લઈ ગયા'તા. પ્રથમ દર્શનમાં જ પ.પૂ. ગુરૂજીએ અમો બન્ને ભાઈઓને પોતાના બનાવી લીધા હતા. તે પછી તો ખૂબ જ આગ્રહ રાખી પ.પૂ. ગુરૂજી અમારા કુટુંબને દરેક સમૈયામાં આવવાનું કહેતા. છ વરસ સુધી આ જ રીતે ખૂબ જ ધીરજ રાખી પ.પૂ. ગુરૂજી અમને દરેક સમૈયામાં બોલાવતા. પછી ૧૯૯૨થી અમે શનિવારની સભામાં આવતા થયાં. અમને શનિવારની સભામાં રેંગ્યુલર આવતા જોઈને પ.પૂ. ગુરૂજીએ સામે ચાલીને અમારા આખા કુટુંબ જોડે સંબંધ બાંધ્યો. ન તો અમારી કોઈ લાયકાત હતી કે ન કોઈ જાતનો અમારો પરિશ્રમ હતો, સાચે જ...

આવો અવસર નહીં મળનાર, આવો જોગ નહીં મળનાર

આવા કરાવનાર ફરી નહીં મળે, આવા કરાવનારા ફરી નહીં મળે...

મ્હારી નાની દિકરી આજ્ઞાથી લઈને મ્હારા પપ્પા (પૂ. અનુકાકા) સુધી બધાંની સાથે તેમણે સામે ચાલીને સંબંધ બાંધ્યો. મ્હારો પ્રથમ અનુભવ લખી રહ્યો છું.

૧૯૯૨ના ડિસેંબર મહિનામાં આપણા મંદિરના પાછળના પાર્કમાં સમૈયો હતો. રાતનો સમય હતો. પ.પૂ ગુરૂજીએ મને બોલાવીને કહ્યું કે *કાલે વ્હેલી સવારે આપણે મલ્કાની અંકલને 'સી ઑફ' કરવા એયરપોર્ટ જવાનું છે. તો ગાડી તું લઈ લેજે.* એ વખતે મંદિરમાં 'ફોર્ડ' ગાડી હતી. મને ગાડી ચલાવતા આવડતી હતી, પણ ૧૦૦% કૉન્ફીડન્સ કહો કે પરફેંક્ટ ડ્રાઈવીંગ ન્હોતું આવડતું. તેથી જ ઘરે આવેલી નવી મારૂતિ વેન પણ હું વધારે ન્હોતો ચલાવતો. પ.ભ. પ્રભાકરભાઈ આ વાત જાણતા હતા. જ્યારે તેમને ખબર પડી કે મ્હારે ગાડી ચલાવાની છે, તો તેમણે એકવાર પ.પૂ. ગુરૂજીને કહ્યું કે *પરેશની જગ્યાએ બીજું કોઈ ગાડી ચલાવી લેશે.* પણ પ.પૂ. ગુરૂજીએ કહ્યું – *ના, પરેશ લઈ લેશે.* ત્યારે વધારે કંઈ સત્સંગની સમઝણ કહો – તેવું કંઈ જ્ઞાન ન્હોતું. પણ એટલું હતું કે પ.પૂ. ગુરૂજી કંઈ કહે તો ના નહીં પાડવી. એટલે મેં તો હા પાડી હતી. બીજે દિવસે સવારે ખૂબ જ ધૂમસ હતું. વ્હેલી સવારે અંધારામાં જ પ.પૂ.ગુરૂજી સાથે એયરપોર્ટ જવા નીકળ્યા. હું અંદરથી બહુ ડરેલો જેવો હતો કે બાજુમાં પ.પૂ ગુરૂજી બેઠા છે અને આ તો ફોર્ડ ગાડી... મ્હારૂં ડ્રાઈવીંગ પણ પરફેંક્ટ નથી... મેં ગાડી કરોલબાગવાળા રસ્તેથી લીધી, જ્યાં એક જગ્યાએ પાંચ રસ્તા ભેગા થતા'તા. હવે તો બધાં રસ્તા બદલાઈ ગયા છે, પણ ત્યારે એવું હતું. મેં ગાડી ભૂલમાં એક કટ પહેલા લઈ લીધી. પણ તરત જ ખ્યાલ પડી ગયો કે આ ખોટો રસ્તો છે. એટલે મેં ગાડી રોકી અને પાછી વાળીને બીજા ટર્ન પર લીધી. ત્યાં તો મને તરત જ વિચાર આવ્યો કે મેં ગાડી પાછી વાળી ત્યારે ગિયર તો બદલ્યું ન્હોતું અને પાછી જ્યારે બીજું ટર્ન લીધું ત્યારે ય ગિયરને હાથ જ ન્હોતો લગાડયો! મને બરોબર યાદ હતું કે મેં ગિયરને હાથ જ ન્હોતો લગાડયો, તો પછી ગાડી પોતાની જાતે આગળ ને પાછળ થઈ કેવી રીતે ? મને આ કંઈ સમજાયું નહીં એટલે મેં પ.પૂ. ગુરૂજીને વાત કરી, તો તેઓ મને કહે કે તું ઊંઘમાં છે એટલે આવી ગાંડા જેવી વાત કરે છે. એમ કહીને વાત ટાળી દીધી. પરંતુ મને તે દિવસે એમણે

એહસાસ કરાવ્યો કે **આપણે તો ખાલી સત્પુરુષની આજ્ઞામાં માથું હલાવીને 'હા' જ પાડવાની હોય છે ; બાકી તો તેઓ બધું સંભાળી લે છે.** તે દિવસથી મને ગાડી ચલાવવામાં કૉન્ફીડન્સ આવી ગયો. અને પછી તો મેં ઘણી અલગ-અલગ ગાડીઓ ચલાવી, પણ ક્યારેય ડર ના લાગ્યો. પ.પૂ. ગુરૂજીએ મને પરફૅક્ટ ડ્રાઈવીંગ પણ શીખવાડી દીધી...

આ રીતે જ બીજો એક પ્રસંગ છે. ૧૩ માર્ચ ૧૯૯૬ના દિવસે મ્હારી મોટી દિકરી આસ્થાનો જન્મ થયો હતો. મંદિરમાં ૧૩માર્ચ - પ.પૂ. ગુરૂજીના પ્રાગટ્ય દિવસનો સમૈયો ચાલતો હતો. ઘરેથી બધા મંદિરે આવ્યા હતા અને હું બીજલ(મ્હારી પત્ની) પાસે રોકાયો હતો. પછી જ્યારે ઘરેથી કોઈ હૉસ્પીટલ આવ્યું , ત્યારે મને મંદિરે જવાનો મોકો મળી ગયો. રસ્તામાં હું વિચાર કરતો-કરતો આવતો હતો કે પ.પૂ. ગુરૂજીને પૂછીશ કે આ બેબીનું નામ શોધી આપો. હું જેવો મંદિરે પ્હોંચ્યો અને મેઈન ગેટથી અંદર દાખલ થયો, તો સામેથી–પ.પૂ. કાકાજીની સમાધિ પાસેથી પ.પૂ. ગુરૂજી, પૂ. પુરી અંકલ અને બીજા હરિભક્તો સાથે આવતા હતા. એટલે હું પ.પૂ. ગુરૂજી પાસે પહોંચ્યો ને જેવા પગે લાગી મેં પ.પૂ. ગુરૂજી ને 'જય સ્વામિનારાયણ' કહ્યા કે તરત જ તેમણે મને કહ્યું– *જો પરેશ, અમે 'આસ્થા' અને 'ફાલ્ગુની', એમ બે નામ વિચાર્યા છે. તને આ બેમાંથી જે ગમે તે તું રાખી લે.* મને આશ્ચર્ય થયું કે આ વાત તો મેં હજી પૂછી પણ નથી, કોઈ બીજાને પણ આ વાત કરી નથી અને પ.પૂ. ગુરૂજીએ તો આવતા વેંત બીજી કોઈ વાત કર્યા વગર સીધી જ આ નામ વાળી વાત કરી! પણ, હવે ખ્યાલ પડે છે કે **આ સત્પુરૂષ તો અંતર્યામી છે અને તેમને તો આપણે અંતરથી યાદ કરીએ તે તેમને સંભળાય છે અને આપણી પળેપળની સંભાળ લે છે.**

પ.પૂ. ગુરૂજીની સેવામાં રહેવાની તક મળવાથી તેમને નજીકથી નિહાળવાના ઘણાં બધાં મોકા મને મળ્યા છે. જ્યારે પણ તેમને જોઈએ તો બસ ભક્તોને લાડ લડાવી, કોઈ પણ રીતે રાજી કરી, પળેપળ એમનું જતન કરી પ.પૂ. કાકાજીનો રાજીપો મળી જાય–તે જ તેમનું નિશાન. સાથોસાથ તેમનો દરેક સ્વરૂપ પ્રત્યે જે સ્વામીસેવકભાવ છે, તેનું પણ મને ઘણીવાર દર્શન થયું. પ.પૂ. પપ્પાજી જ્યારે-જ્યારે દિલ્હી મંદિર પધારે, ત્યારે પ.પૂ. ગુરૂજી પોતાના પર્સનલ સેવકને ખાસ ઇન્સ્ટ્રક્શન આપીને પ.પૂ. પપ્પાજીની સેવામાં રાખતા અને મારા જેવાને, જે રોજ એમની પાસે ન હોય–એને પોતાની જોડે રાખીને કામ ચલાવે. પોતાની ગાડી, પોતાની રૂમ કે બીજી કંઈ વસ્તુ આપી દે–એ તો સમજાય, પણ પોતાનો પર્સનલ સેવક, જેના વગર જરા ય ફાવતું ન હોય, એના વગર પણ ચલાવી લેતા, જેથી કે સ્વરૂપોની બરોબર કાળજી લેવાય અને સાથોસાથ દરેક સ્વરૂપોનો મહિમા નિરંતર ગાઈને તેઓનું માહાત્મ્ય પણ એમણે અમોને સમજાવ્યું છે.

પ.પૂ. કાકાજીને કરોડો કરોડો ધન્યવાદ કે આવા પ.પૂ. ગુરૂજી અમોને ભેંટ આપ્યા કે જેથી કરીને અમે દરેક સ્વરૂપોનો મહિમા સમજી શક્યા અને હવે તેઓ ભક્તોના મહિમા વિષે બહુ જ પરિશ્રમ લઈ રહ્યા છે. તો, એજ પ્રાર્થના કે અમો એકબીજાં સાથે રસબસ થઈ, અરસપરસ પ્રેમ ને કુટુંબભાવ રાખી એકબીજાનું માહાત્મ્ય સમજીને તેમને રાજી કરી લઈએ.

– પરેશ મહેતા (ગુજરાત ઍપાર્ટમેન્ટ્સ, દિલ્હી)

[हिन्दी अनुवाद]

प.पू. गुरुजी के दर्शन मुझे पहली बार 1986 में हुए। पू. प्रमितभाई मुझे और पू. विजयभाई (मेरे बड़े भाई) को देर रात्रि के समय ए-103 के (पुराने) मंदिर में प.पू. गुरुजी के दर्शन के लिए ले गए थे। प्रथम दर्शन में ही प.पू. गुरुजी ने हम दोनों भाइयों को अपना बना लिया था। उसके बाद तो प.पू. गुरुजी खूब आग्रहपूर्वक हमारे परिवार को हर एक उत्सव में मंदिर आने के लिए कहते। छः साल तक खूब धीरज रखते हुए प.पू. गुरुजी हमें हर एक उत्सव में बुलाते रहे। फिर 1992 से हम शनिवार की सभा में आने लगे। हमें शनिवार की सभा में लगातार आते हुए देख कर प.पू. गुरुजी ने स्वयं हमारे पूरे परिवार के साथ संबंध जोड़ा। न तो हम इस क़ाबिल थे और न ही हमने किसी प्रकार का कोई परिश्रम किया था, सच में...

ऐसा अवसर नहीं मिलेगा, ऐसा जोग नहीं मिलेगा

ऐसा करवाने वाले फिर नहीं मिलेंगे, ऐसा करवाने वाले फिर नहीं मिलेंगे...

मेरी छोटी बेटी आज्ञा से लेकर मेरे पापा (पू. अनुकाका) तक सभी के साथ स्वयं ही पहल करके उन्होंने संबंध बनाया। मैं अपना पहला अनुभव लिख रहा हूँ–

1992 दिसंबर महीने में हमारे मंदिर के पीछे के पार्क में उत्सव हो रहा था। रात का समय था। प.पू. गुरुजी ने मुझे बुला कर कहा– *कल सुबह हमें जल्दी ही मल्कानी अंकल को 'सी-ऑफ' करने एयरपोर्ट जाना है। तो गाड़ी तू ले लेना।* उस समय मंदिर में 'फोर्ड' गाड़ी थी। मुझे गाड़ी चलाना आता था, लेकिन सौ प्रतिशत कॉन्फीडन्स कहो या परफॅक्ट ड्राईविंग नहीं आती थी। इसीलिए घर में आई हुई नई मारुति वेन भी मैं ज्यादा नहीं चलाता था। प.भ. प्रभाकरभाई को इस बात की जानकारी थी। जब उन्हें पता चला कि मुझे गाड़ी चलानी है, तो उन्होंने एक बार प.पू. गुरुजी से कहा कि *परेश की जगह कोई और गाड़ी चला लेगा।* लेकिन प.पू. गुरुजी ने कहा– *नहीं, परेश ही चलाएगा।* उस समय सत्संग की कुछ समझ या ऐसा कोई ज्ञान नहीं था। लेकिन इतना अवश्य जानता था कि प.पू. गुरुजी कुछ करने के लिए कहें, तो मना नहीं करना। सो, मैंने तो 'हाँ' कर दी। अगले दिन सुबह बहुत धुंध थी। जल्दी सुबह के अंधेरे में ही प.पू. गुरुजी के साथ एयरपोर्ट जाने के लिए निकल गए। मैं अंदर से खूब डरा हुआ था कि साथ में प.पू. गुरुजी बैठे हुए हैं और यह तो फोर्ड गाड़ी है... मेरी ड्राईविंग भी परफॅक्ट नहीं... मैंने गाड़ी करोल बाग वाले रास्ते से ली, जहाँ एक जगह पर पाँच कट थे। अब तो सभी रास्ते बदल गए हैं, लेकिन तब ऐसा था। भूल से मैंने गाड़ी एक कट पहले ले ली; लेकिन, तुरंत ही ख्याल पड़ गया कि यह तो गलत रास्ता है। सो, मैंने गाड़ी रोकी और वापिस मोड़ कर अगले टर्न पर ली। तुरंत ही मुझे ख्याल आया कि मैंने गाड़ी जब पीछे मोड़ी, तब गियर तो बदला नहीं था और जब दोबारा दूसरा टर्न लिया, तब भी गियर को तो हाथ तक नहीं लगाया था! मुझे ठीक से याद था कि मैंने गियर को हाथ ही नहीं लगाया, तो फिर गाड़ी खुद ही आगे और पीछे किस प्रकार हुई? मुझे जब यह समझ नहीं आया, तो मैंने प.पू. गुरुजी से बात की। तब वे मुझसे बोले कि तू नींद में है, इसलिए ऐसी पागलपन की बात कर रहा है। यूँ कह कर उन्होंने बात को टाल दिया। परंतु उस दिन उन्होंने

मुझे एहसास करवाया कि **हमें तो केवल सत्पुरुष की आज्ञा में सिर हिला कर 'हाँ' ही करनी होती है , बाकी तो वे ही सब संभाल लेते हैं।** उस दिन से मुझे गाड़ी चलाने में कॉन्फीडन्स आ गया और फिर तो मैंने कई अलग-अलग गाड़ियाँ चलाईं, लेकिन कभी भी डर नहीं लगा। ऐसा अनुभव कराने के साथ-साथ प.पू. गुरुजी ने मुझे परफॅक्ट ड्राईविंग भी सीखा दी...

ऐसा ही दूसरा प्रसंग है। 13 मार्च 1996 के दिन मेरी बड़ी बेटी आस्था का जन्म हुआ। मंदिर में 13 मार्च – प.पू. गुरुजी के प्राकट्य दिन का उत्सव हो रहा था। घर से सभी मंदिर आए थे और मैं बीजल (मेरी पत्नी) के पास रुका था। बाद में जब घर से कोई हस्पताल आया, तब मुझे मंदिर जाने का मौका मिल गया। रास्ते में मैं सोच रहा था कि प.पू. गुरुजी से कहूँगा कि इस बेबी का नाम ढूँढ कर दे दीजिए। मैं मंदिर जैसे ही पहुँचा और मेईन गेट से अंदर दाखिल हुआ, तो देखा कि सामने से – प.पू. काकाजी की समाधि के पास से प.पू. गुरुजी, पू. पुरी अंकल और अन्य हरिभक्त साथ में आ रहे थे। सो, मैं प.पू. गुरुजी के पास पहुँचा और पाँव छू कर जैसे ही मैंने प.पू. गुरुजी को 'जय स्वामिनारायण' कहा तो तुरंत ही उन्होंने मुझसे कहा –

देख परेश, मैंने 'आस्था' और 'फाल्गुनी', ये दो नाम सोच कर रखे हैं। तुझे इन दोनों में से जो पसंद आए, वह रख ले।

मुझे आश्चर्य हुआ कि यह बात तो मैंने अभी पूछी भी नहीं, किसी और से भी यह बात नहीं की और प.पू. गुरुजी ने तो दूसरी कोई बात किए बिना सीधी ही यह नाम वाली बात की! लेकिन, अब ख्याल पड़ता है कि **ये सत्पुरुष तो अंतर्यामी हैं और उन्हें हम अंतर से याद करें, तो वे सुनते हैं और पल-पल हमें संभालते हैं।**

प.पू. गुरुजी की सेवा में रहने का अवसर मिलने से उन्हें नज़दीक से निहारने का खूब मौका मुझे मिला है। जब भी उन्हें देखें, तो बस भक्तों को लाड़ लड़ाते दिखते हैं। किसी भी प्रकार राजी करके, पल-पल उनका जतन करके प.पू. काकाजी की प्रसन्नता मिल जाए – वही उनका निशान। साथ ही साथ हर एक स्वरूप के प्रति (उनका) जो स्वामीसेवकभाव है, उसका भी मुझे कई बार दर्शन हुआ। प.पू. पप्पाजी जब-जब दिल्ली मंदिर आते, तब प.पू. गुरुजी अपने पर्सनल सेवक को खास इन्स्ट्रक्शन्स देकर प.पू. पप्पाजी की सेवा में रखते और मेरे जैसे किसी भी मुक्त से – जो कि रोज उनके पास नहीं होता – उसे अपने साथ रख कर काम चला लेते। अपनी गाड़ी, अपना रूम या अन्य कोई चीज दे दें – यह तो समझ सकते हैं, लेकिन अपना पर्सनल सेवक, जिसके बिना चलता नहीं, उसके बिना भी वे चला लेते, ताकि स्वरूपों की ठीक से सेवा हो पाए। साथ ही साथ, हर एक स्वरूप की महिमा निरंतर गाकर उनका माहात्म्य भी उन्होंने हमें समझाया है।

प.पू. काकाजी को करोड़ों-करोड़ों धन्यवाद कि ऐसे प.पू. गुरुजी हमें भेंट में दिए कि जिनके द्वारा हम हर एक स्वरूप की महिमा समझ सके और अब तो वे भक्तों की महिमा समझाने भी खूब परिश्रम कर रहे हैं। तो, यही प्रार्थना कि हम एक-दूसरे के साथ ओतप्रोत होकर, एक-दूसरे के प्रति प्रेम और कुटुंबभाव रख कर, एक-दूजे का माहात्म्य समझ कर उन्हें राजी कर लें।

– परेश महेता (गुजरात एपार्टमेन्ट्स, दिल्ली)

सौरभ - २६

स्वामिश्रीजी

ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज का विशिष्ट अनुग्रह...

* सत्संग में जुड़ने से पूर्व ही मैं नित्य श्रीमद्‌भगवत् गीता का पाठ करती थी। सो, रोज की भाँति एक दिन पाठ करते हुए सहज ही विचार आया कि मुझे भी ऐसे प्रभु मिल जाएं, जो मेरी कलाई थाम कर इस भवसागर से पार ले जाएँ; तभी कल्याण होगा। फिर जब मुझे सत्संग का योग हुआ, तो प.पू. गुरुजी ने भी एक बार कुशलकुंवर बा का प्रसंग बताया कि श्रीजी महाराज ने उनकी कलाई थाम कर उनका संकल्प पूरा किया था।

  प.पू. काकाजी दिल्ली आए हुए थे। दोपहर के समय वे पलंग पर बैठे हुए थे। मैं ठाकुरजी के हॉल में बैठी हुई दूर से उनके दर्शन कर रही थी। यकायक प.पू. काकाजी उठ कर हॉल में आए और मेरी कलाई पकड़ी और दूसरे कमरे में बैठे प.पू. गुरुजी से कहा– *'मुकुंद, ज़रा चाकू लाकर मुझे दे, मुझे मधु का खून निकालना है, बड़ा मीठा है।'* प.पू. गुरुजी ने सेवक द्वारा एक ऑल पिन प.पू. काकाजी को भिजवाई। प.पू. काकाजी ने मेरी कलाई पकड़ कर उंगली में वह ऑल पिन दो-तीन बार चुभाई। प्रभु तो प्रेम की जैसे बारिश कर रहे थे। एक मोहक अनमोल दृष्टि मेरे ऊपर डाली। एक वियोगी आत्मा को तारणहार मिले। अंतरात्मा की प्यास बुझी। आँखें बरबस छलछला उठीं। मुझे तो केवल प.पू. गुरुजी की कृपा से अक्षरपति, कृपानिधान, कृपासागर, भक्तवत्सल प.पू. काकाजी महाराज का परिचय मिला!

* सन् 1982 की बात है। एक दिन प.पू. काकाजी दोपहर को मेरे घर आराम करने के लिए आए थे। आराम करने के बाद उन्होंने उठ कर कॉफी पी। फिर मुझसे बोले–माँग तुझे क्या माँगना है? मैंने कहा–मेरे पास तो सब कुछ है। प.पू. काकाजी फट् से बोल उठे– *मुझसे सब जब पहली बार मिलते हैं, तो कुछ न कुछ आशीर्वाद के रूप में माँगते ही हैं। तू मुझे पहली लेडी मिली है जिसने कुछ नहीं माँगा। मैं तुझसे बहुत राजी हो गया। जा, **जैसे बलि राजा के घर भगवान बंधे रहे हैं, मैं तेरे पास बंधा रहूँगा।*** प.पू. काकाजी के वे आशीर्वाद तो मुझे कुछ समझ ही नहीं आए। पर, इस आशीर्वाद का रहस्य तो 15-**20 साल के बाद** जब **मेरे बच्चों की शादी** हुई, तब समझ में आया। शादी **की शान-शौकत और जलवा सब प.पू. काकाजी के आशीर्वाद की बदौलत था।**

* प.पू. काकाजी महाराज जब भी दिल्ली आते, तो सभा में खूब धुन करवाते थे। सभा में पहले बीस मिनिट की धुन तो अवश्य करवाते थे। 1983 की बात है , काकाजी ने सभा में धुन शुरू करवाई। वैसे धुन में सभी के मन में कोई न कोई विचार तो अवश्य आता है। पर, इस दिन मुझे एक पल के लिए भी कोई विचार नहीं आया। धुन समाप्त हुई तो प.पू. काकाजी ने मुझ से पूछा–मधु, समाधि लग गई क्या? यह सुनते ही मैं भौंचक्की होकर उनके दर्शन करती रही। उस दिन मुझे प.पू. काकाजी की ब्राह्मीशक्ति का एहसास अंदर तक हो गया।

* सन् 1984 की 11 मार्च को प.पू. काकाजी दिल्ली आए हुए थे। 11 मार्च को रविवार होने के कारण,

प.पू. गुरुजी का जन्मदिन 13 मार्च की बजाय 11 मार्च को मनाया जा रहा था। इसी दिन हमारी शादी की सालगिरह होती है। प.पू. काकाजी ने अंतर्यामी रूप से अतिशय सुंदर गुलाब के फूलों का एक बड़ा हार मुझे पहनाने के लिए प.पू. दीदी से कहा। शायद उनकी ऐसी परवरिश और शुभाशीष के कारण आज भी दूर रहते हुए हम मंदिर में आते रहते हैं।

* प.पू. काकाजी दिल्ली आते ही रहते थे। एक दिन दोपहर को मैं ए-103 के मंदिर में प.पू. काकाजी के दर्शन कर रही थी। प.पू. काकाजी एकदम पलंग से उठ कर मेरे पास आए और ठाकुरजी के पास मुझे ले गए। ठाकुरजी के पास से कुछ फूल उठा कर मेरे सिर पर रखे। उस समय मेरे पूरे शरीर में ब्राह्मीशक्ति का मानो एक करन्ट-सा दौड़ गया।

* 6 दिसंबर 1985 को प.पू. काकाजी महाराज दिल्ली पधारे थे। सुबह की सभा का प्रारंभ धुन, प्रार्थना से हुआ। सभा के पश्चात् प.पू. काकाजी ने मुझ से कहा– *'मधु, मुझे तुझसे कुछ खानगी करनी है।'* मुझे कुछ समझ ही नहीं आया। दोपहर को वे घर पर आराम करने आए। आराम करने के बाद जब उठे, तो मैंने प.पू. काकाजी के लिए कुछ संतरे छील कर रखे हुए थे। उसमें से थोड़ा प्रसाद मुझे देते हुए मुझसे बोले– *'इस बात का घमंड कभी मत करना कि बहनों को मैंने अपने घर पर रखा था।'* जब वे घर से विदा होने लगे, तब मुझे आज्ञा की कि शाम की सभा सौ. मंजुलाबेन पटेल के घर पर है, जरुर पहुँच जाना। शाम को वहाँ सभा हुई और सभा में उन्होंने बहुत बातें की। सबसे विशेष बात यह की– ***'मेरे आगे-पीछे फिरने से कुछ नहीं होगा; जो पू. गुरुजी को राजी कर लेगा, मैं उसके वश हो जाऊँगा।'***
  सभा समाप्त होने पर मुझे कमरे के अंदर बुलाया। मेरे हाथ में जल और केले का प्रसाद देकर कहा– ***देख, मैं अब दिल्ली नहीं आने वाला। मेरी फ़िकर करनी छोड़ दे, तुझे बड़ी फ़िकर लगी रहती है कि काकाजी घर पर आएँगे, तो मैं उन्हें क्या खिलाऊँगी?***

सर्वोपरि स्वरूप प.पू. काकाजी ने यह कह कर कि अब मैं आने वाला नहीं हूँ–अपना एक अद्‌भुत इशारा मुझे दे दिया था। पर, तब मेरा नादान मन इस बात का रहस्य समझ ही नहीं पाया। इस मर्म का रहस्य तो 7 मार्च 1986 को समझ आया, जब प.पू. काकाजी ने स्थूल शरीर छोड़ दिया।

प.पू. गुरुजी की कृपादृष्टि...

* सन् 1982 की ही बात है। मैं नई-नई मंदिर में आई थी। प.पू. गुरुजी की महिमा, शक्ति या कार्य शैली का तो मुझे कुछ भी ख्याल नहीं था। दो-चार बार आने के बाद प.पू. गुरुजी ने मुझे कंठी-माला भिजवाई। मेरे जैसे तुच्छ प्राणी पर मानो अमृत बरसा दिया। मुझे चौबीस घंटे चारों तरफ बस प.पू. गुरुजी की मूर्ति के ही दर्शन होते और कुछ भी एहसास नहीं रहता था।
  जीव जब परमात्मा से मिलता है तो उस चिदाकाश की भूमिका को वह सहज सहन नहीं कर पाता और सोचता है कि मुझे यह क्या हो गया है। ऐसी स्थिति में मैं मूर्तियाँ, कंठी-माला सब सनातन मंदिर के पंडितजी को दे आई। परंतु प.पू. गुरुजी तो सर्वज्ञ अंतर्यामी... सब जान गए। रविवार की एक सभा में

सेवक को मेरे घर भेजा। उसने मुझसे कहा कि प.पू. गुरुजी ने महाराज व प.पू. काकाजी की मूर्ति मंगवाई है। मैं सकपका गई, क्योंकि मूर्ति तो मेरे पास नहीं थी। मैंने सेवक से कहा- आप मंदिर जाओ, मैं लेकर आती हूँ।

सनातन मंदिर जाकर मैंने सारा सामान यानि – मूर्ति, कंठी लाकर प.पू. गुरुजी को वापिस की। पर, अंदर ही अंदर आत्मा को चोट-सी लगी कि मैंने कुछ अच्छा नहीं किया। मैं मंदिर भी जाती रही, यह सोच कर कि पू. गुरुजी हमसे तो बड़े हैं न? धीरे-धीरे प्रगट प्रभु की महिमा समझ में आने लगी, तब मैंने प.पू. गुरुजी को अपनी गलती कहलवा दी कि आपके द्वारा दी गई कंठी, माला, मूर्ति तो सब मैं सनातन मंदिर में दे आई थी। यह बताते हुए खूब रोई, पर प.पू. गुरुजी तो भक्तों के भक्त! अद्‌भुत वात्सल्यभरा दिल! एकदम झट से कहलवा दिया कि इस बात के लिए रोती क्यों है? माला-कंठी देने वाला तो बैठा है न! सो, मेरे पागलपन को माफ़ करते हुए प.पू. गुरुजी ने मेरे लिए दोबारा कंठी-माला एवं मूर्ति भिजवाई।

* सन् 1982 का एक और प्रसंग जब मैं मंदिर में नई-नई आई थी। एक दिन मैंने प.पू. गुरुजी को सेवक द्वारा कहलवाया कि मुझे आगरा देखने की बहुत इच्छा है। प.पू. गुरुजी तो कृपालु, दयालु, कृपानिधान माँ जैसे! बस दो गाड़ियाँ कीं और मुझे मेरे पति के साथ आगरा ले गए और वहाँ सब दिखाया। वापसी के समय गाड़ी में मैं आँखें बंद करके बैठी थी। उस समय आगरे से दिल्ली तक के पूरे सफर में प.पू. गुरुजी ने धरती से एक फुट ऊपर चलते हुए मुझे लगातार दर्शन दिए!
* सन् 1984 में मुंबई से पवई की साध्वी बहनें आई थीं। प.पू. गुरुजी ने दोपहर के भोजन के पश्चात् सभी बहनों के लिए डोंगा भर कर फ्रूट सलाद खाने के लिए भिजवाया। प्रसाद की महिमा समझ कर मैंने वो फ्रूट सलाद धीरे-धीरे सब खत्म कर दिया। इसके बाद मैं मंदिर से घर गई, तो रास्ता तय करना बेहद कठिन हो गया था। घर जाकर मैं बिस्तर पर लेट गई। पाँच-दस मिनिट बाद ही प.पू. गुरुजी सेवकों के साथ घर पर आ गए। मुझ में तो काढ़ा बनाने की तनिक भी हिम्मत नहीं थी। बड़ी मुश्किल से तो मैं कमरे से बाहर आई।

  अंतर्यामी स्वरूप (प.पू. गुरुजी) मेरी हालत जानते थे। उन्होंने कहलवाया कि मैं आज काढ़ा नहीं पीऊँगा। बस, कॅम्पा कोला पिला दो। प.पू. गुरुजी ने जैसे-जैसे वह पी वैसे ही वैसे मेरा पेट, जो बेहद भारी था, एकदम हल्का हो गया। मानो मैंने फ्रूट सलाद खाया ही नहीं। प.पू. गुरुजी ने पुछवाया भी कि क्या हुआ। मैंने सेवक से कहलवाया – आपने जैसे-जैसे कॅम्पा पी, वैसे-वैसे फ्रूट सलाद का प्रसाद हज़म हो गया। प.पू. गुरुजी द्वारा भेजे गए प्रसाद की ऐसी महिमा-दिव्यता हमेशा रख पाएँ – ऐसी उनके चरणों में प्रार्थना!
* सन् 1990 की बात है। घर बनवाने के दौरान मैं एकादशी का व्रत रखना भूल गई। प.पू. गुरुजी को हम जैसे तुच्छ जीव की कितनी चिंता रहती है, वह बताती हूँ। रात को प.पू. गुरुजी सपने में आए। एक सेवक से खाने का थाल मँगवाया जिसमें चार-पाँच पूरी, भाजी, मिठाई थी। सेवक से कहा कि यह प्रसाद मधु जीजी को दे दो। अचानक मेरी नींद खुल गई। मुझे अपनी गलती का एहसास होने लगा। विचार आया कि

हो न हो आज एकादशी है और उठ कर कॅलेन्डर देखा, तो सच में एकादशी थी। मन में बेहद दुःख हुआ। हमारी गलती के कारण प.पू. गुरुजी को हमारे लिए कितनी मेहनत-परिश्रम करना पड़ता है। इसके बाद हमेशा एकादशी-व्रत का विशेष ख्याल रखती हूँ।

* मार्च सन् 1998 की बात है। हम शाहदरा के अपने घर में दो-तीन कमरे नए बनवा रहे थे। मैं कार्य में अधिक व्यस्त होने के कारण घर के मंदिर में ठाकुरजी के आगे केवल दीपक जला देती थी, आरती नहीं करती थी। प.पू. गुरुजी ने सपने में आकर कहा– मधु, आरती डॅईली किया करो, भले ही तुम कितनी भी व्यस्त हो। उस दिन से प.पू. गुरुजी नियम से मुझसे आरती करवा रहे हैं।

दिल्ली के नूतन गुणातीत समाज का अद्भुत दर्शन...

* गुणातीत संत तो हमारे जीव को महाराज में जोड़ने का ही उद्यम करते हैं। उनकी महिमा, वात्सल्य, प्रेम, वर्तन का वर्णन करना तो बहुत ही मुश्किल है, ऐसा करने में हम असमर्थ हैं। पर, मैं तो प्रेमभरी, गुणकारी, वात्सल्यभरी अपनी बहनों की यहाँ पर एक छोटी-सी बात बताती हूँ। सन् 1987 की बात है, मेरे पति विजय बाबु बीमार हुए और उन्हें सुंदरलाल अस्पताल में दाखिल कराया गया। आई.सी.यू. में विजय बाबु को प.पू. गुरुजी रोज सुबह देखने के लिए आते ही थे। उनकी महिमा का क्या वर्णन करूँ, वह तो अकथनीय है। पर, प.पू. गुरुजी द्वारा तैयार की गई बहनें पू. स्मिता दीदी, पू. निष्ठा दीदी की बात करती हूँ– ऐसे समय में उन्होंने न केवल मुझे सहारा दिया, बल्कि मेरे बच्चों, मेरे घर-परिवार, यहाँ तक कि मेरे घर आने वाले मेहमानों की दिल से, चौबीस घंटे सेवा-टहल की। मैं अंतिम सांस तक इन बहनों का ऋण अदा नहीं कर पाऊँगी।

* मंदिर से जुड़े हुए मुझे पच्चीस साल हो गए हैं। प.पू. गुरुजी 15 मई से 15 जून तक एक महीने लगातार धुन का कार्यक्रम रखवाते हैं। उसमें सभी हरिभक्त आते हैं। पहले मैं मंदिर के नज़दीक रहती थी। लेकिन 1993 में मैं अशोकविहार छोड़ कर शाहदरा रहने चली आई। सो, सन् 2000 तक धुन के कार्यक्रम में मेरा आना लगभग बंद हो गया था। मई 2000 में प.पू. दीदी ने मुझसे कहा कि अब तो आपकी बेटी अन्नी की शादी हो गई है, अब आप धुन में आया करो। मैंने कहा–'दीदी, आने का कोई साधन बन नहीं पाता है। मैंने सुना है कि प.भ. कमल भैया थ्री व्हीलर से मंदिर आते हैं। अगर आप उनसे कह दें तो मैं धुन में आ जाया करुँगी।' उसी स्कूटर में प.भ. जयप्रकाशजी और सौ. शशि मल्होत्राजी भी धुन में आते थे। प.पू. दीदी ने प.भ. जयप्रकाशजी से कहा कि आप अगर मधु जीजी को स्कूटर में अपने साथ ले आओ, तो बहुत अच्छा रहेगा। आज भी मैं प.भ. जयप्रकाशजी की ऋणी हूँ क्योंकि उन्होंने तो प.पू. दीदी की इस बात को शिरोधार्य कर लिया। **वे खुद इतनी बड़ी पोस्ट पर होते हुए भी प.भ. कमल भैया के साथ आगे बैठ कर मुझे पूरे एक महीने धुन में लाते रहे।** धन्य है गुणातीत परंपरा के ऐसे भक्तों को!

मुझे हमेशा यही लगता है कि प.पू. गुरुजी अपनी ब्राह्मी शक्ति से हमें हर रोज धुन में बुला लेते हैं। अपनी ताक़त से तो कोई शायद दो-चार दिन ही जा पाए। एक बार इस विषय पर चर्चा हुई, तो किसी ने मुझसे

कहा कि तुम सभी अपने दृढ़ निश्चय के कारण मंदिर धुन में जा पाते हो। मैंने कहा–नहीं, प.पू. गुरुजी के बल के कारण ही जा पाते हैं। उस दिन जैसे ही मैं धुन में आई, तो प.पू. गुरुजी के प्रवचन में पहली लाइन यही थी– ***'दूर से जो भक्त आते हैं, उन्हें हम खूब याद करते रहते हैं।'*** **अंतर्यामी रूप से प्रभु ने यह बात की!**

जैसे बारिश शरीर पर पड़ कर मन को हल्का कर देती है, उसी तरह एक महिने की यह धुन हृदय में प्रवेश करके आत्मा को शुद्ध करती है।

* मैं मंदिर तो अधिकतर आती हूँ, परंतु जब कभी भी दिल्ली से बाहर जाने का कार्यक्रम बनता है, तो न के बराबर ही जाती हूँ; क्योंकि तेल से तला हुआ खाना खाने से मुझे एलर्जी हो जाती है। कुछ वर्ष पहले प.पू. गुरुजी ने **छपैया जाने का प्रोग्राम** बनाया। उसमें मुझे भी आने के लिए आज्ञा दी। मैंने भी हाँ कहलवाया दी, जबकि मैं जानती थी कि बाहर जाकर मुझे खाने इत्यादि की तकलीफ होती है। ट्रेन के लिए खाना तो मैं घर से बना कर ले गई थी। पर, अगले दिन रात को खाने के बारे में मुझे परेशानी हुई कि क्या खाऊँ? प.पू. दीदी को जब यह बात किसी भाभी से पता चली, तो तुरंत उन्होंने मुझे बुलाया और कहा कि आप मुझे बता देंती तो मैं कुछ न कुछ आपके खाने के लिए प्रबंध करवा देती। उस दिन रात के दस बज चुके थे, सो प.पू. दीदी ने दूध और ब्रेड मेरे लिए भिजवाई। अगले दिन से **प.पू. दीदी ने दोनों समय मेरे लिए खाने का विशेष प्रबंध करवाया।** सच, **उनके जैसी वात्सल्यभरी माँ हमें कहाँ मिलेगी?**

  जिस दिन छपैया से दिल्ली के लिए वापिस आना था, उस दिन भी बहुत ठंड थी। सुबह साढ़े सात बजे छपैया से निकलना था। पू. स्मिता दीदी वहाँ की रसोई में जाकर मेरे लिए आलू के चार परांठे बना कर ले आईं और मुझे देते हुए कहा कि जीजी, इसे अपने पर्स में रख लो। दो सुबह और दो शाम को खा लेना। प.पू. गुरुजी द्वारा खूब ममतामयी और प्यारभरी बहनें तैयार की गईं हैं! **सगे-संबंधी भी ऐसा प्यार न करें। इस प्रसंग को जब भी याद करती हूँ, मेरी आँखें नम हो जाती हैं। पू. स्मिता दीदी को दिल से मेरा हार्दिक जय स्वामिनारायण!**

* प.पू. गुरुजी सबका ध्यान रखने वाले एक महान संत हैं। साथ ही प.पू. दीदी भी उन्हीं की भाँति सभी का खूब ख्याल रखती हैं। पिछले वर्ष प.पू. गुरुजी ने सभी से **'मैत्री मिलन महोत्सव'** में चलने के लिए कहा। बाहर जाने पर मुझे खाने-पीने की तकलीफ होती है। लेकिन **मैंने सोचा कि भले ही मुझे कितनी तकलीफ क्यों न हो, पर मैं मुंबई के इस महोत्सव में तो जाऊँगी ही।** यह सारी बात मैंने प.पू. दीदी से की थी। उन्होंने मुझसे–जीजी, आप मेरे साथ चलो। मैं आपके खाने का अलग से प्रबंध करवा दूँगी। जिस दिन मुंबई जा रहे थे, तब पता चला कि प.पू. दीदी तेज़ बुखार के कारण नहीं आ रही हैं। मन कुछ बोझिल-सा हो गया। पहली जनवरी को निकल कर दो तारीख को मुंबई पहुँचे। दोपहर के प्रसाद के समय मैंने कुछ नहीं खाया था, केवल खीर का प्रसाद ही लिया। साथ में आईं पानीपत की पू. अंजलि भाभी ने शायद यह चुपके से नोट किया। उन्होंने, बिना मेरे कुछ बताए, मुंबई में रहती अपनी बहन को फोन करके कहा कि शाम को उत्सव में जब वो आए तो एक जने के लिए खाना बना कर ले आए। रात को वह खाना

उन्होंने मुझे बहुत प्यार से खिलाया। ऐसे प्रसंग से सहज ही ख्याल आया कि प.पू. गुरुजी ने आज दिल्ली के समस्त सत्संगियों में कैसा कुटुंबभाव जाग्रत किया है। ऐसी प्यारी अंजलि भाभी को सारी जिंदगी भी भुलाने जाऊँ, तो क्या भुला पाऊँगी? कभी नहीं। इसके बाद सागर से गहरा प्यार रखने वाली प.पू. दीदी की बात करती हूँ। दो जनवरी की रात को दिल्ली में बैठे हुए **प.पू. दीदी** को ख्याल आया कि जीजी तो मुंबई उत्सव में चली गईं और मैं नहीं गई। तो, **अपनी इतनी अस्वस्थ अवस्था होते हुए भी उन्होंने पू. बंसरी दीदी से फोन पर कहा कि जीजी के खाने की व्यवस्था अलग से कैसे भी करा देना।** इसके तुरंत बाद तो सभी बहनें पू. स्मिता दीदी, पू. स्वाति दीदी एलर्ट हो गईं। उन्होंने हर दिन हर समय मेरे लिए खाने का अलग से प्रबंध करवा दिया।

* प.पू. गुरुजी ने ताड़देव मंदिर के हॉल में लिखवाया है कि **धुन सभी समस्याओं का समाधान है।** प.पू. गुरुजी ने दिल्ली में ऐसे–ऐसे भक्तों का सृजन किया हुआ है जो भले मंदिर बहुत कम आते हैं, लेकिन अपने घर पर प.पू. गुरुजी द्वारा बताए गए नियम धर्म खूब पालते हैं। कृष्णा नगर में रहती पू. पूनम भाभी की बेटी सौ. पूजा भले मंदिर कम ही आ पाती है, परंतु सुबह-शाम एक घंटे की धुन नित्य करती है। ऐसे भक्तों के समक्ष मस्तक सहज ही झुक जाता है।

प.पू. दीदी जिस डायरी में प.पू. काकाजी की परावाणी नोट करती थीं, उसमें मैंने पढ़ा था कि **प.पू. काकाजी ने** किसी सभा में **कहा था** कि ***गुरुजी पूरे गुणातीत समाज में प्रखर व तीक्ष्ण बुद्धिशाली साधु हैं।*** पर हमारी बुद्धि कितनी छोटी? सोचा कि प.पू. काकाजी ने ठीक कहा कि पू. गुरुजी बुद्धिशाली हैं, पर उनका देह तो जॅपनीज़ जैसा है। पर, अब बीस साल के बाद प.पू. काकाजी द्वारा दिए आशीर्वाद का मर्म समझ में आता है।

प.पू. गुरुजी ने पूरे गुणातीत समाज में संप, सुहृद्‌भाव और एकता बनाए रखने का **पुनः बीड़ा उठाया है,** जिसके लिए उनके द्वारा किया जा रहा परिश्रम, मेहनत और अत्यधिक प्रयत्न हम सभी को स्पष्ट दिखाई देता है। समग्र गुणातीत समाज में सर्वदेशीयता और सुहृद्‌भाव का नूर तो बहाया ही, सभी भक्तों की आत्मा को भी सुदृढ़ किया है। धुन-भजन करा कर आध्यात्मिक उन्नति भी कराई है। इससे भी अधिक भक्तों के व्यावहारिक कार्यों में रुचि लेकर एक नए कार्य की योजना की अलख जगा दी है। यही नहीं, **भक्तों को जात-पात से ऊपर उठा कर, सत्संग को ही अपनी बिरादरी मनवा कर, सत्संगियों के बच्चों की आपस में शादी करवाई।** इस प्रकार यहाँ नए-नवीन, उन्नत उत्कृष्ट गुणातीत समाज की अगुआई प.पू. गुरुजी दिल से कर रहे हैं।

सन् 2012 में ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज के साक्षात्कार की हीरक जयंती और प.पू. गुरुजी का अमृतपर्व आ रहे हैं। सो यही प्रार्थना कि सभी मुक्तों की सच्ची महिमा सदैव अपने दिल में संजो कर रखते हुए हम उस रास्ते पर चलते हो जाएं।

– सौ. मधु किशोर (शाहदरा, दिल्ली)

✡✡✡

उत्तर की बहनों के लिए काकाजी ने चुन लिया...

बहनें भगवान भजें, इसमें क्या गलत है? ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज का यह वाक्य सुनते या पढ़ते ही गुरुहरि काकाजी महाराज द्वारा बहनों के भगवान भजने के लिए उठाया गया परिश्रम स्पष्ट दिखाई देने लगता है। गुणातीत समाज के सभी पुराने जोगियों को विदित है कि **गुरुवर्य योगीजी महाराज** की मर्जी जान कर और ब्रह्मस्वरूप पप्पाजी महाराज को साथ में लेकर गुरुहरि काकाजी महाराज ने बहनों के भगवान भजने की शुरुआत करवाने के लिए खूब अपमान-गालियाँ सह कर एक राजमार्ग स्थापित किया। सर्वप्रथम **प.पू. ज्योति बहन, प.पू. तारा बहन, प.पू. हंसा दीदी एवं प.पू. देवी बहन** – ये चार बहनें नींव का पत्थर बनीं और... 1966 में तो '**गुणातीत ज्योत**' की स्थापना हुई। गुजरात में स्वामिनारायण संप्रदाय से सभी भलीभाँति परिचित थे, अतः सहज ही 'गुणातीत ज्योत' की बहनों से प्रेरणा पाकर अन्य बहनें भी भगवान भजने की राह पर अग्रसर हुईं।

परंतु, उस समय उत्तर भारत की भूमि पर तो 'स्वामिनारायण' के नाम तक से कोई परिचित नहीं था। ऐसी विषम परिस्थिति में गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज एवं गुरुहरि योगीजी महाराज के संकल्प को पकड़ कर ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज ने प.पू. गुरुजी को दिल्ली में आकर सत्संग का प्रचार करने की आज्ञा दी। धीरे-धीरे सत्संग का विकास होने पर प.पू. गुरुजी अशोकविहार में किराए के मकान में मंदिर बना कर रहने लगे। तभी **एक पंजाबी कुटुंब की लड़की सत्संग के परिचय में आई। वो थी हमारी प.पू. दीदी!**

सत्संग में निरंतर आते हुए उन्होंने भगवान भजने का मार्ग अपनाया। परंतु, परिवारजनों की अनुमति न मिलने के कारण उन्हें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। वे अपने ध्येय के प्रति अडिग रहीं, तभी तो गुरुहरि काकाजी महाराज ने आख़िर उन्हें विजयी बनाया। यूँ, उत्तर भारत की बहनों का श्रेय करने के लिए ही मानो गुरुहरि काकाजी महाराज ने उन्हें चुना... जो आज संबंध में आने वाली बहनों-भाभियों के हर प्रकार के विकास के लिए अपनी देह तक की परवाह नहीं करतीं। ऐसी दिव्य चैतन्य माँ के स्वर्ण प्राकट्य दिन पर कोटि-कोटि वंदन!

13 जनवरी 2011 – लोहड़ी के मंगलकारी दिन **प.पू. दीदी का 50वाँ प्राकट्य दिन, प.पू. ज्योति बहन एवं प.पू. दिनकरभाई की निश्रा में**, सभी ने खूब हर्षोल्लास से मनाया। प.पू. दीदी की अंतस इच्छा थी कि –

पूरा गुणातीत समाज एकाकार हो जाए और हम गुरुहरि काकाजी महाराज का मुद्दे का यह कार्य संपन्न करें, तभी उनका जन्मदिन धूमधाम से मनाना सार्थक माना जाएगा।

सो, उनकी हार्दिक इच्छा को शिरोधार्य करते हुए स्थानीय रूप से ही यह उत्सव मनाने का आयोजन किया था। इसी हेतु से गुणातीत समाज के अन्य केन्द्रों में भी यही मॅसेज दिया था। लेकिन, **प.पू. दिनकरभाई एवं पू. बापु जब मुंबई आए और उन्हें पता चला, तो उन्होंने तो कहलवा ही दिया कि *हम तो आने ही वाले हैं।*** साधु की मर्यादा के कारण प.पू. गुरुजी तो सभा में हाज़िर नहीं हो पाते, अतः **प.पू. दिनकरभाई के रूप में मानो ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज ही अपनी 'आनंदी' की स्वर्णजयंती मनाने आ गए।** दूसरी ओर, प.पू. पप्पाजी स्वरूप चैतन्य माँ **प.पू. ज्योति बहन** तो अंतिम क्षण पर सूचित करके एक दिन पहले ही दर्शन, सेवा, समागम और आशीर्वाद देने आ गईं। **उनकी हाज़िरी ने ब्रह्मस्वरूप पप्पाजी महाराज की अनुभूति करवा दी।** दरअसल प.पू. ज्योति बहन

के बारे में प.पू. दीदी की भावना थी कि इस उम्र में उन्हें इतना परिश्रम देना उचित नहीं।

13 जनवरी की पूर्व संध्या से ही अक्षरज्योति का भवन एवं पूरा ताड़देव मंदिर रोशनी से जगमगा उठा! प.पू. दिनकरभाई की निश्रा में छोटी सभा हुई। तत्पश्चात् प.पू. दीदी की स्वर्ण जयंती के उपलक्ष्य में केक कटिंग हुई। प.पू. गुरुजी की ओर से प.पू. दिनकरभाई ने प.पू. दीदी को 'स्मृतिभेंट' दी, जिसमें गुलाब का सुनहरा फूल अंकित था और वर्षों पहले प.पू. काकाजी द्वारा प.पू. दीदी को दिए गए आशीर्वाद लिखे थे।

13 जनवरी, गुरुवार की सायं पौने पाँच बजे सभा आरंभ हुई। प.पू. गुरुजी की दादी यानि – पू. हंसा दादी, पू. निष्ठा दीदी, पू. गार्गी दीदी, पू. सविता भंडारीजी, पू. मधु जीजी एवं पू. प्राची पंडयाजी ने प.पू. दीदी के प्रति अपने भाव व्यक्त किए। प.पू. दीदी के स्वर्ण प्राकट्योत्सव के उपलक्ष्य में पू. प्राचीजी ने प.पू. दीदी के भजनों की सी डी 'स्वर्ण स्वर-7' का अनावरण किया।

तत्पश्चात् हारविधि की मंगल घड़ी आई, जो उत्तर भारत के सभी मुक्तों के लिए **चिरंजीव स्मृति रूप** बन गई। प.पू. ज्योति बहन गुणातीत ज्योत की बहनों की ओर से प.पू. दीदी के लिए अद्भुत हार, मुकुट, बाजूबंद इत्यादि बनवा कर ले आई थीं। पू. डॉ. वीणा बहन, पू. रसीला बहन एवं अक्षरज्योति की बहनों ने मिल कर प.पू. दीदी को ये आभूषण पहनाए। **इस मुद्रा में प.पू. दीदी सभी को साक्षात् एक देवी के रूप में नज़र आईं और... उनके ऐसे दर्शन करके ज्यादातर मुक्त इतने भावविभोर हो उठे कि उनकी आँखों से अश्रुधारा बहने लगी!** हारविधि के कार्यक्रम में दिल्ली, मुंबई, अमदावाद, पंजाब के मुक्तों ने प.पू. दीदी को हार एवं कार्ड अर्पण करके अपनी भावनाएँ व्यक्त कीं। **दासत्वभक्ति की मूर्तस्वरूप प.पू. दीदी ने प्रत्येक हार को प.पू. गुरुजी की प्रसादी का करवा कर ही धारण किया...** हरिधाम से प.पू. प्रेम दीदी ने आशीर्वाद के रूप में हार, गिफ्ट एवं कार्ड भेजा। इसी प्रकार मुंबई से प.पू. भरतभाई, पू. वशीभाई एवं पू. योगिनी बहन ने भी आशीर्वाद पत्र व भेंट पू. अश्विनभाई द्वारा भिजवाई थी। शिकागो मंडल की ओर से भी प.पू. दीदी को हार अर्पण किया गया...

तत्पश्चात् पू. बापु, प.पू. दिनकरभाई ने प.पू. सोनाबा की स्मृति करते हुए आशीर्वाद दिए और प.पू. ज्योति बहन ने तो घरेलू सभा को संबोधित करते हुए खूब आशिष बरसाए। अंत में प.पू. दीदी ने प.पू. काकाजी एवं प.पू. गुरुजी की कई स्मृतियाँ कराते हुए आशिष प्रदान किए और पू. मल्कानी अंकल ने प.पू. दीदी के जन्म दिन पर उन्हें बधाई देते हुए उपस्थित भक्तों, मुक्तों का आभार प्रकट किया।

सभा के अंत में दिल्ली गुणातीत समाज की किशोरिओं ने भावनृत्य प्रस्तुत किए, जिन्हें देख कर मुंबई से आईं '**नृत्य उर्वशी पू. प्राचीजी**' के पाँव थिरकने लगे और... अपने आपको रोक नहीं पाईं। सो, उन्होंने भी कुछ पंक्तियों पर नृत्य करके अपनी भावनाएँ प.पू. दीदी के प्रति प्रकट कीं और सभा ने प्रसाद लेने के लिए प्रस्थान किया।

रात के पौने ग्यारह बज चुके थे, यानि करीब सवा छः घंटे से अधिक यह सभा चली, लेकिन वहाँ हाज़िर मुक्तों की श्रद्धा तनिक भी कम नहीं हुई थी। किसी को भी भूख-प्यास की सुधबुध ही नहीं थी।

यह देख कर हम सोचने के लिए मज़बूर हो जाते हैं कि प.पू. दीदी ने इन सभी मुक्तों के दिल में कैसा स्थान पाया है और प.पू. दीदी ने दिन-रात इनकी कैसी परवरिश की है!

संपादक : प्रभाकर राव

✡✡✡

ताड़देव की गतिविधियाँ...

* छोटा हो या बड़ा मुक्त, हर एक कैसे राजी हो और भगवान व संत के साथ उसका संबंध कैसे बढ़े–दृढ़ हो, इसी हेतु प.पू. गुरुजी दिन-रात उद्यम करते हैं। रुद्रपुर में रहने वाले प.भ. विजय शर्मा के जुड़वा बच्चों का 13 नवंबर को जन्मदिन होता है। बच्चों में सत्संग द्वारा अच्छे संस्कार उदित हों, इस भावना से प.भ. विजय शर्मा ने पिछले वर्ष प.पू. गुरुजी से अपने घर रुद्रपुर आने का आग्रह किया था। पर, अब की बार तो 'बड़े घर दीवाली शिविर' पूर्ण होते ही, करीब 20 मुक्तों को साथ में लेकर, 12 नवंबर की रात की ट्रेन से प.पू. गुरुजी उन दोनों छोटे बच्चों को आशीर्वाद देने के लिए रुद्रपुर के लिए रवाना हो गए। 13 की सुबह प.पू. गुरुजी उनके घर पहुँचे और सायं **शुभं** व **मंगलं** का जन्मदिन मनाया। अगले दिन सुबह प.भ. गिरिश तायलजी के नए घर पर महापूजा की और सायं प.भ. विजय के घर सत्संग सभा की। 15 नवंबर की सुबह वहाँ संघवी परिवार की फॅक्टरी में महापूजा की और रात की ट्रेन से दिल्ली वापिस आने के लिए निकले।

* ***'जो दृढ़ सत्संगी वैष्णव हैं, वे ही हमारे सगे-संबंधी हैं***
और
वे ही हमारी बिरादरी है व इस देह के रहते हमें ऐसे वैष्णव के साथ ही रहना है...'

ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज, ब्रह्मस्वरूप पप्पाजी महाराज और कांतिकाका के परिवार ने वच. ग. अत्यं 21 की उपरोक्त पंक्तियाँ अपने जीवन में चरितार्थ करके हम सभी के लिए एक आदर्श स्थापित कर दिया और... प.पू. गुरुजी यह बात न केवल दोहराते रहते हैं, बल्कि सभी सत्संगी इस दिशा में अग्रसर हों, यही उनकी चाह और चेष्टा रहती है।

प.पू. गुरुजी की ऐसी चाहना को आकार देते हुए दिल्ली के प.भ. सुशील भास्करजी ने अपने सुपुत्र चि. राहुल की शादी जगरांव के प.भ. अशोक शर्माजी की बेटी चि. मुकुंदा से करने का निर्णय लिया। इससे पहले भी करीब चार-पाँच हरिभक्तों ने सत्संगी को ही अपनी बिरादरी मान कर अपने बच्चों की शादी सत्संगी परिवार में ही की है और उसमें उन्होंने अपनी जाति-गोत्र इत्यादि को आड़े नहीं आने दिया।

21 नवंबर–तुलसी विवाह के मंगल दिन मंदिर के हॉल में श्री ठाकुरजी के समक्ष विवाह होना निश्चित हुआ। इस विवाह की विशेषता यह थी कि दोनों परिवारों ने प.पू. गुरुजी के कहे अनुसार बिलकुल सादगी से विवाह करने का सोचा और इसमें दूल्हा-दुल्हन ने भी खूब महिमा से साथ दिया। वर्ना, आज के युग में जवान बच्चों के कई-कितने अरमान होते हैं। परंतु प.पू. गुरुजी कैसे राजी हों, इस ओर ही उनकी निगाह थी। शादी का कार्ड भी उन्होंने निमंत्रण के रूप में नहीं, बल्कि सूचना के रूप में छपवाया था। परंतु प.भ. सुशीलजी ने अपने जितने भी रिश्तेदारों को वह कार्ड दिया-भेजा, उन्होंने भी इस बात का बुरा न मानते हुए उत्सुकता से कहा कि वे यह देखने तो अवश्य ही आएंगे कि जगत की रीति से हट कर यह कैसी शादी हो रही है?

20 नवंबर की सायं शनिवार की सत्संग सभा में सगाई का कार्यक्रम हुआ। अगले दिन सुबह दस बजे महापूजा में ही शादी संपन्न होनी थी।

फिज़ूल खर्च न करने के हेतु से चि. राहुल ने न तो शेरवानी बनवाई और न ही सौ. कां. मुकुंदा ने लंहगा बनवाया। सत्संग में पहले जिनकी शादी हो चुकी थी, उन्हीं की शेरवानी व लहंगा खूब महिमा से उन दोनों ने पहने। इस प्रकार **आजकल हज़ारों क्या, लाखों रुपये ऐसे वस्त्रों पर खर्च होते हैं, जो जीवन में एक ही बार पहन कर रख दिए जाते हैं–ऐसे फिज़ूल खर्च को नकार दिया।** शादी भी दिन में रखी थी, ताकि लाईटिंग इत्यादि का खर्चा न हो। यूँ तो इसी वर्ष ठाकुरजी के हॉल का कार्य पूर्ण हुआ था और हॉल बनने के बाद उसमें यह पहला ही विवाह था, सो शादी की खुशी ज़ाहिर करते हुए उसे फूलों से सुसज्जित किया गया। महंगे वस्त्रों की भाँति बैण्ड-बाजे व घोड़ी के खर्च को भी नज़रअंदाज करते हुए चि. राहुल सामान्य ढंग से, लेकिन भजन-कीर्तन के माहौल में, हॉल के द्वार पर आया। जगत की रीति के मुताबिक लड़की वालों ने चि. राहुल, उनके माता-पिता एवं सगे-संबंधियों का द्वार पर स्वागत किया। तत्पश्चात् प.पू. गुरुजी के कहे अनुसार, पू. अभिषेक ने प.पू. दीदी की निश्रा में महापूजा की शुरुआत की। महापूजा के दौरान ही शादी की विधि संपन्न हो, इस हेतु से ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज से जुड़े हमारे पुराने जोगी **प.भ. विनोदभाई पुरोहित** को प.पू. गुरुजी ने मुंबई से खास बुलवाया था। महापूजा में ही उन्होंने शादी की सारी रस्में संपन्न करवाईं। पूरा माहौल दिव्यता से भरपूर था। शादी संपन्न होने के बाद प.पू. गुरुजी हॉल में आए और आशीवर्चन द्वारा उन्होंने दोनों परिवारों पर खूब प्रसन्नता ज़ाहिर की। यह सारा माहौल देख कर प.भ. सुशीलजी के **कई रिश्तेदारों** ने **जो कि सत्संग से परिचित भी नहीं थे, उन्होंने** भी यही **कहा** कि ***समाज के लिए यह शादी एक आदर्श बनी रहेगी; शादियाँ ऐसे ही होनी चाहिएँ...***

* प.भ. अनुज दुरेजाजी करीब 28 साल से सत्संग में बहुत ही अपनेपन से जुड़े हुए हैं। उनकी मौसी के पुत्र प.भ. रजनीशजी दुबई रहते हैं और जब भी उनका प.भ. अनुजजी के घर आना होता है, वे अकसर मंदिर आते हैं। पिछले एक-दो बार से वे अपनी पत्नी सौ. स्मृति भाभी को मंदिर लेकर आए थे। वे भी खूब धार्मिक विचारों से युक्त हैं। सो, एक-दो बार जब भी मंदिर आईं, तो सहज ही प.पू. गुरुजी के दर्शन करते हुए-भजन सुनते हुए उनका रोना निकल आता। सितंबर महीने में प.भ. रजनीशजी एवं सौ. स्मृति भाभी मंदिर आए और जिस दिन वे दुबई के लिए लौट रहे थे, उस दिन दोपहर को मंदिर दर्शन करने आए। सहज ही प.पू. गुरुजी ने उनसे पूछा कि फ्लाईट से दुबई का कितने घंटे का रास्ता है? तो प.भ. रजनीशजी ने बताया कि तीन-साढ़े तीन घंटे की फ्लाईट होती है। यह सुन कर प.पू. गुरुजी यकायक बोले–यह तो दूर नहीं है, मैं तुम्हारे यहाँ आऊँगा। सभी मुक्त जानते हैं कि पिछले कई वर्षों से शिकागो से प.पू. दिनकर अंकल एवं मंडल प.पू. गुरुजी को वहाँ बुलाने का आग्रह करता रहता है। परंतु, **प.पू. गुरुजी का मन इंडिया से बाहर जाने के लिए होता ही नहीं।** यह सुन कर सभी

उपस्थित मुक्त हैरान थे कि पहले भी कई मुक्तों ने प.पू. गुरुजी को विदेश बुलाया, परंतु प.पू. गुरुजी कभी भी एकदम से जाने के लिए 'हाँ' नहीं भरते; लेकिन अबकी...!

बाद में सौ. स्मृति भाभी की बातों से ख्याल पड़ा कि उनके गुरु एक बार दुबई के पास कहीं आए थे। सो, वे उनके दर्शन करने गईं थीं। तब उनके गुरु ने उनसे कहा था कि एक बार मैं तुम्हारे घर आऊँगा और उनसे घर का पता भी माँगा। थोड़े दिन बाद खबर मिली कि जालंधर में उनके गुरु का कार एक्सीडॅन्ट हुआ और उसके बाद उन्होंने समाधि ले ली। बाद में शिष्यों से पता चला कि जब उनके गुरु ने शरीर छोड़ा, तो उनके गुरु के कुर्ते की जेब में एक कागज़ था, जिस पर प.भ. रजनीशजी के घर का पता लिखा हुआ था। यूँ उनके गुरु दो वर्ष पूर्व अंतर्धान हो गए और उनके स्थूल रूप से जाने बाद सौ. स्मृति भाभी को अपने जीवन में एक खालीपन-सा महसूस होने लगा। **मानो अंतर्यामी रूप से उनके अंतर के खालीपन जान कर, उसे भरने के लिए प.पू. गुरुजी ने दुबई जाने का प्रोग्राम बनाया!**

प.पू. गुरुजी ने 'बड़े घर दीवाली शिविर' हो जाए, उसके बाद जाने के ख्याल से 24 नवंबर को दुबई आने की तारीख प.भ. रजनीशजी को बताई। यह सुनते ही प.भ. रजनीशजी बोले कि 25 नवंबर को तो हमारी शादी की सालगिरह होती है। जैसा कि प.पू. गुरुजी अकसर कहते हैं , भक्त की ख़ुशी के मुताबिक ही प्रभु संत को वर्ता लेते हैं, उसी का यह हुबहु दर्शन था। करीब 25 मुक्तों का दुबई जाने का कार्यक्रम बना।

24 नवंबर की सायं का वह **ऐतिहासिक दिन** भी आ पहुँचा, जब प.पू. गुरुजी मुक्तों को साथ में लेकर दिल्ली से दुबई के लिए रवाना हुए। **ऐतिहासिक इसलिए कि प.पू. गुरुजी का मानो यह प्रथम विदेशगमन था।** रात को करीब दस बजे प.पू. गुरुजी दुबई एयरपोर्ट पर पहुँचे। प.भ. राकेशभाई, प.भ. आशिष आदि कुछ भक्त दो दिन पहले ही वहाँ पहुँच गए थे; अतः प.भ. रजनीशजी एवं उनके परिवार के साथ वे भी एयरपोर्ट पर प.पू. गुरुजी का स्वागत करने पहुँच गए थे। रात को प.भ. रजनीशजी के घर पर ही प.पू. गुरुजी ठहरे एवं अन्य मुक्त नज़दीक के सर्विस एपार्टमेन्ट्स में ठहरे।

अगले दिन 25 नवंबर की सुबह प.पू. गुरुजी की निश्रा में पू. अभिषेक ने प.भ. रजनीशजी की शादी की सालगिरह के निमित्त महापूजा की। उनका पूरा घर दिव्यता से भर गया। सायं प.भ. रजनीशजी के एपार्टमेन्ट्स के हॉल में प.पू. गुरुजी ने सत्संग सभा की और प.भ. रजनीशजी की शादी की सालगिरह भी मनाई गई। हम सभी जानते हैं कि प.पू. गुरुजी को भीड़ पसंद ही नहीं। सो, प.भ. रजनीशजी ने प.पू. गुरुजी के कहे मुताबिक केवल उन्हीं करीबी लोगों को बुलाया था कि जिन्हें सच में सत्संग की बातें सुनने का चाव था। इसी सभा में 'शारजा' से **डॉ. अरुण भट्ट** भी प.पू. गुरुजी के दर्शन करने आए। इन्हें देखते ही प.पू. गुरुजी बोल उठे– *अरुण आया तो ऐसा लगा, मानो परदेस में मुझे कोई अपना मिल गया।* सभा समाप्त होने के बाद सभी ने प्रसाद लिया।

अगले दिन 26 नवंबर की सुबह प.पू. गुरुजी सभी मुक्तों के साथ प.भ. रजनीशजी के ऑफिस गए और वहाँ धुन की। दोपहर को लौट कर भोजन किया और सायं चार बजे प.भ. रजनीशजी की इच्छा के

मुताबिक समुंदर (अरबियन सी) में बोटिंग के लिए गए। वहाँ से प.भ. रजनीशजी के घर वापिस आकर थोड़ा आराम किया और रात को साढ़े आठ बजे के करीब प.भ. राकेशभाई शाह के कज़िन प.भ. मनीषभाई के घर पधरामणी के लिए गए। वहाँ प.पू. गुरुजी एवं सभी मुक्तों ने प्रसाद लिया। उनके घर का माहौल देख कर प.पू. गुरुजी एकदम बोल उठे– *ऐसा लग रहा है कि गुजरात के अपने गाँव के किसी घर में आ गए हों।* **प.भ. मनीषभाई एवं उनकी पत्नी सौ. दर्शिनी भाभी की भावना देखते ही बनती थी।** प.पू. गुरुजी के आने की खुशी में उन्होंने सुबह से कुछ भी खाया तक नहीं था। दरअसल, जब वे दिल्ली में रहते थे, तब भी अकसर आते थे। लेकिन, **आज उनकी प.पू. गुरुजी के प्रति छुपी प्रीति का दर्शन हो रहा था।** और तो और प.पू. गुरुजी जितने दिन दुबई में रहे, सौ. दर्शिनी भाभी हर रोज दर्शन, सेवा और समागम के लिए प.भ. रजनीशजी के घर आ जाती थीं। **जब प.पू. गुरुजी दिल्ली लौटने के लिए निकल रहे थे, तब वे इतनी भावुक हो गई थीं कि उनके अश्रुओं का बांध टूट गया...** ऐसे मुक्तों का दर्शन करके ख्याल आता है कि मौज में हमें कैसी विभूति का सहज संबंध हो गया!

27 नवंबर की सुबह भी धुन-भजन और सभा की। कुछ मुक्त शॉपिंग के लिए गए। लेकिन, प.पू. गुरुजी तो पूरे दिन प.भ. रजनीशजी के घर ही रहे और सायं प.भ. रजनीशजी के साथ 'दुबई मॉल' में अपने प्यारे नक्षु के लिए एक स्कूटर पसंद करने के लिए गए। वहाँ 164 मंज़िल की इमारत 'बुर्ज़ खलीफा' और फाऊन्टन शॉ देख कर रात को प.भ. रजनीशजी के घर लौट आए।

28 नवंबर की सुबह भी धुन-भजन के पश्चात् प.पू. गुरुजी ने स्वामिनारायण कथामंगल में से श्रीजी महाराज के कुछ प्रसंग पढ़वाए। सभा के बाद कुछ मुक्त 'डॅज़र्ट सफारी' के लिए गए। प.पू. गुरुजी तो ये चार दिन मानो प.भ. रजनीशजी के परिवार को लाभ देने के लिए ही आए थे। पर, प.भ. रजनीशजी की बार-बार इच्छा होती कि एक बार तो प.पू. गुरुजी को दुबई की लाईटिंग वगैरह दिखा कर लाएँ। संत तो भक्त की मर्जी में ही खुश रहते हैं, सो प.भ. रजनीश की इच्छा पूरी करने के लिए रात दस बजे प.पू. गुरुजी सभी मुक्तों को साथ में लेकर दुबई की प्रसिद्ध इमारतें–जैसे कि सात सितारा होटल 'बुर्ज़-अल-अरब', पाम आयलेन्ड में स्थित 'एटलान्टिस होटल' देख कर, साथ गए मुक्तों को स्मृतियाँ देकर रात को करीब एक बजे लौटे।

अगले दिन 29 की सुबह धुन-भजन के बाद कुछ मुक्त 'डॉलफिन शॉ' देखने गए। इसी रात को दस बजे भारत (दिल्ली) आने के लिए प.पू. गुरुजी एवं सभी मुक्तों की फ्लाईट थी। सो, अन्य मुक्त पॅकिंग इत्यादि करने में लगे थे। सायं छः-साढ़े छः बजे प.भ. रजनीशजी के घर से प.पू. गुरुजी को सारे परिवार ने भावभरे अश्रुओं से विदाई दी। दुबई के समय के मुताबिक रात को साढ़े दस बजे के करीब फ्लाईट उठी और अगले दिन सुबह, भारत के समय के मुताबिक, करीब ढाई बजे दिल्ली के अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर पहुँचे।

प.पू. गुरुजी करीब सवा तीन बजे मंदिर पहुँचे और अंदर दाखिल होते ही इनके मुँह से निकला–

'धरती का दामन हिंदुस्तान' !

दरअसल मुहावरा है– 'धरती का दामन घर!' पर, भारत के प्रति उनके अगाध प्रेम और भारतीय होने का गुमान के ही मानो ये उद्‌गार थे।

थोड़ी ही देर आराम करके 6:50 की धुन के लिए तो ठाकुरजी के हॉल में विराजमान हो गए। उत्तर के मुक्तों के प्राणाधार व गुरुस्थान पर होते हुए और स्थूल दृष्टि से 74 वर्ष की आयु में भी प.पू. गुरुजी भक्ति अदा करने में पीछे नहीं रहते, इसका यह स्पष्ट उदाहरण था। वर्ना, पूरे दिन की थकान और पूरी रात जगे होने के कारण वे धुन के लिए न बैठें, ऐसी सभी मुक्तों की अंतर से प्रार्थना थी। परंतु, प्रभुधारक विभूति अपने चरित्रों द्वारा साधकों के लिए आदर्श स्थापित करते हैं कि भजन करने में कोई भी चीज आड़े नहीं आनी चाहिए।

इससे भी अधिक, छः दिन के बाद सुबह ही तो वे दुबई से आए थे कि दोपहर को ढाई बजे एयरपोर्ट जाने के लिए निकल गए और **गुरुहरि प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी** के दर्शन के लिए सायं पाँच बजे की फ्लाईट द्वारा मुंबई के लिए रवाना हुए। दरअसल, दुबई में ही प.पू. गुरुजी को सूचना मिल गई थी कि 1 दिसंबर को प.पू. स्वामिजी का स्पाईन का ऑपरेशन होगा। सो, प.पू. गुरुजी ने वहीं से 30 दिसंबर की सायं की टिकिट बुक करवा दी थी। प.पू. गुरुजी मुंबई पहुँच कर एयरपोर्ट से सीधे अस्पताल में प.पू. स्वामिजी के दर्शन करने के लिए पहुँच गए। अगले दिन सुबह प.पू. स्वामिजी का ऑपरेशन हुआ और सर्जरी की कुशल खबर जानने के बाद अगले दिन यानि 2 दिसंबर की रात की फ्लाईट से दिल्ली लौटे... तब उनके मुखारविंद पर तनिक भी थकावट लगती नहीं थी और उसे देख कर अतंर से बस यही प्रार्थना निकल रही थी कि **हे काकाजी! प.पू. गुरुजी सदैव इसी प्रकार स्वस्थ एवं निरोगी रहें और हमेशा ऐसे ही वे हमें अपने दर्शन, सेवा, समागम का सुख देते रहें।**

* दिल्ली सत्संग समाज के हमारे पुराने जोगी, जिनकी पहचान अब प.पू. गुरुजी को समर्पित उनके सुपुत्र, **अभिषेक के पिता** के नाम से बनी है, उन **प.भ. वच्छराज वर्माजी** के छोटे सुपुत्र **चि. हृदय** का विवाह 9 दिसंबर को होना निश्चित था। लड़की पक्ष भले ही स्वामिनारायणी नहीं, परंतु खूब संस्कारी परिवार है। संजोगवश विवाह मंदिर में ही होना निश्चित हुआ, परंतु लड़की के परिवार के बुज़ुर्ग उसी जगत की रीति से विवाह करने का आग्रह रखते थे। काफी समय तक इस विषय में मशक्कत-सी भी चलती रही, लेकिन... ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज अकसर कहते थे कि हमारी भावना को हाथ-पैर आते हैं। चि. हृदय के विवाह ने मानो उसका दर्शन करवाया।

चि. राहुल की शादी 21 नवंबर को मंदिर में ही हुई थी। प.भ. वच्छराजजी ने अपने समधी प.भ. महेशजी को भी इस विवाह में बुलाया था। इस शादी का सारा माहौल देख कर प.भ. महेशजी एवं उनके साथ आए परिवारजनों को दिव्यता की ऐसी अनुभूति हुई कि उसी शाम को उन्होंने प.भ. वच्छराजजी को फोन पर कह दिया कि भले ही कार्ड में जो भी समय इत्यादि छपा हो, पर हमें भी अपनी लड़की की शादी मंदिर में

इसी ढंग से करवानी है।

और... 9 दिसंबर की सायं साढ़े पाँच बजे मंदिर के द्वार पर चि. हृदय की बारात पहुँच गई। लड़की पक्ष ने सबका स्वागत किया और फिर सभी मंदिर के हॉल में इकट्ठे हुए। संतों की मर्यादा के कारण प.पू. गुरुजी तो शादी में हाज़िर नहीं होते, पर ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज ने प.पू. भरतभाई एवं पू. वशीभाई द्वारा वह पूर्ति करवा दी और... पू. अभिषेक ने प.पू. भरतभाई, पू. वशीभाई एवं प.पू. दीदी की निश्रा में महापूजा की शुरुआत की एवं पंडितजी ने महापूजा में ही शादी की रस्म संपन्न करवाई और प.पू. दीदी ने भी इस बार निम्न **सप्तपदी*** लिख कर तैयार की थी, वह रस्म पू. वशीभाई ने पढ़ कर चि. हृदय एवं सौ. ईशा से करवाई। इसे सुन कर उपस्थित कई हरिभक्त तो यहाँ तक बोले कि हमें भी ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज की समाधि की सात परिक्रमा करते हुए यह सप्तपदी दम्पति जीवन का आधार बनानी चाहिए। खूब दिव्यताभरे माहौल में शादी संपन्न हुई। शादी संपन्न होने के बाद प.पू. गुरुजी हॉल में आशीर्वाद देने के लिए आए। साथ ही, प.पू. भरतभाई, पू. वशीभाई ने भी आशिष दी।

*दंपति के लिए प.पू. दीदी द्वारा रचित सप्तपदी–

'सप्तपदी' का अर्थ है–पत्नी को संग लेकर सात कदम चलना।

- *छोटे-बड़े हर कार्य में 'पहले प्रभु और फिर कदम'–ऐसी जीवनशैली अपनाने का* ***पहला कदम****।*
- *'भगवान, संत और सत्संगी को ही सत्य' मान कर प्रत्येक व्यवहार करने की प्रतिज्ञा का* ***दूसरा कदम****।*
- *भगवत्स्वरूप संत को जीवन के केन्द्र में रखते हुए*
  'पति परमेश्वर' की समझ और 'एक नारी सदा ब्रह्मचारी' के न्याय सह
  गृहस्थाश्रम को धन्य बनाने की प्रार्थना के साथ सौभाग्य का ***तीसरा कदम****।*
- *एक-दूजे को समझते हुए परस्पर विश्वास और अटूट प्रेम का* ***चौथा कदम****।*
- *कर्ताहर्ता 'प्रगट प्रभु' को ही मान कर सुख-दुःख में प्रसन्नतापूर्वक एक-दूसरे का साथ देने का* ***पाँचवां कदम****।*
- *बच्चों में धर्मसंस्कार और विद्या के सिंचन का* ***छट्ठा कदम****।*
- *बड़ों की मर्यादा और सम्मान रखने का* ***सातवाँ कदम****।*

दंपती के मधुर संबंध एवं समृद्ध दिव्य गृहस्थाश्रम की यह है 'सप्तपदी'।

चि. राहुल की शादी की भाँति चि. हृदय की शादी में भी आए हुए कई नए मुक्तों के मुख से ये ही उद्गार निकले कि **यह शादी समाज में चली आ रही रुढ़ि से हट कर एक आदर्श प्रस्तुत करने वाली शादी थी...** दरअसल, **प.पू. गुरुजी** ऐसे आदर्श विवाहों द्वारा समाज को **संदेश देना चाहते हैं** कि **'समाज सेवा' के केवल नारे लगाने से समाज की कुरीतियाँ दूर नहीं होंगी। बल्कि प्रभु एवं उनके अखंड धारक संतों से जुड़े समर्पित मुक्तों-सत्संगियों की ऐसी शुरुआत से रुढ़ियों और भेड़चाल को समाप्त करने की समाज को सही दिशा दी जा सकती है।** धन्य है ऐसे प्यारे गुरुजी और धन्य उनकी आज्ञा में निरंतर वर्तता समाज!

याद कराने...

2012 के मंगलमयी वर्ष में **प.पू. काकाजी महाराज के साक्षात्कार को 60 वर्ष** पूर्ण हो रहे हैं,
सो, अब 2012 की 3, 4 एवं 5 फरवरी के तीन दिन
'योगी परिवार हीरक आनंदोत्सव' के रूप में मनाएंगे
और...
तब साथ ही प.पू. गुरुजी का 75 वां प्राकट्योत्सव भी मना लेंगे।
तो, प.पू. काकाजी महाराज के साक्षात्कार की हीरक जयंती एवं
प.पू. गुरुजी के 75 वें प्राकट्योत्सव निमित्त
प.पू. काकाजी और प.पू. गुरुजी के अनुभव,
जो आपको भीतर तक छू गए हों,
उन्हें हिन्दी / अंग्रेजी में लिख कर नीचे दिए पते* पर भेजते रहें,
जिससे कि 'भगवत् कृपा' के इस स्तंभ के अंतर्गत
वो देने की भक्ति हमसे अदा हो सके।
सेवक **प्रभाकर** के हार्दिक जय स्वामिनारायण!

'योगी परिवार का अद्‌भुत सर्जन..... प.पू. काकाजी की सौरभ!'

યાદ કરાવવા...

2012 ના મંગળકારી વર્ષે **પ.પૂ. કાકાશ્રીના સાક્ષાત્કારને ૬૦ વરસ** પૂરા થાય છે,
તેથી હવે ૨૦૧૨ની ૩, ૪ ને ૫ ફેબ્રુઆરીના ત્રણ દિવસ
'યોગી પરિવાર હીરક આનંદોત્સવ' રૂપે ઊજવીશું;
અને...
ત્યારે પ.પૂ. ગુરૂજીનો ૭૫મો પ્રાગટ્યોત્સવ પણ ભેગો ઊજવી લઈશું.
પ.પૂ. કાકાશ્રીના સાક્ષાત્કારની હીરક જયંતી અને પ.પૂ. ગુરૂજીના ૭૫મા પ્રાકટ્યોત્સવ નિમિત્તે
પ.પૂ. કાકાશ્રી અને પ.પૂ. ગુરૂજીના અનુભવ-પ્રસંગો
જે આપને અંતરતમ સુધી સ્પર્શી ગયા હોય,
એ ભલે ગુજરાતીમાં લખીને નીચેના સરનામે* મોકલતા રહેશો,
જેથી 'ભગવત્ કૃપા'ના આ સ્તંભ હેઠળ એ આપવાની અમે ભક્તિ અદા કરી શકીએ.
સેવક **પ્રભાકર**ના હાર્દિક જય સ્વામિનારાયણ!

---

*प.भ. प्रभाकर राव / प.पू. आनंदी दीदी C/o 'भगवत् कृपा'
श्री अक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण मंदिर, 'ताड़देव', काकाजी लेन, स्वामिनारायण मार्ग, अशोकविहार-III, दिल्ली – 110 052
❋ फोन – 4709 1281, 2730 1327 ❋ फॅक्स: 4709 1280 ❋ ई मेईल – taaddev@ydsd.org, aksharjyoti@ydsd.org

निमंत्रण

प.पू. गुरुजी की निश्रा में –

3 फरवरी 2011, गुरुवार प्रातः 8:30 से 11:00

अशोकविहार 'ताड़देव' श्री अक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण मंदिर का पाटोत्सव

और

ब्रह्मस्वरूप प.पू. काकाजी महाराज का साक्षात्कार दिन मनाएंगे...

इस मंगलकारी अवसर पर इष्ट मित्रमण्डली सहित
उपस्थित रहने का आपको हार्दिक निमंत्रण है।

व्रतोत्सवसूची

(1)	दि.	29.1.2011,	शनिवार	—	एकादशी – व्रत **ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज की स्वधामगमन तिथि**
(2)	दि.	3.2.'11,	गुरुवार	—	**ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज का साक्षात्कार दिन** और **श्री अक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण मंदिर – दिल्ली का पाटोत्सव**
(3)	दि.	8.2.'11,	मंगलवार	—	वसंतपंचमी, शिक्षापत्री जयंती, **ब्रह्मस्वरूप स्वामिश्री शास्त्रीजी महाराज का प्रागट्य दिन**
(4)	दि.	14.2.'11,	सोमवार	—	एकादशी – व्रत
(5)	दि.	15.2.'11,	मंगलवार	—	**प्रगट ब्रह्मस्वरूप प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी का अमृतपर्व**
(6)	दि.	28.2.'11,	सोमवार	—	एकादशी – व्रत
(7)	दि.	2.3.'11,	बुधवार	—	महाशिवरात्रि, व्रत
(8)	दि.	5.3.'11,	शनिवार	—	**प.पू. गुरुजी की प्रागट्य तिथि**
(9)	दि.	7.3.'11,	सोमवार	—	**ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज के स्वधामगमन की रजत जयंती**
(10)	दि.	13.3.'11,	रविवार	—	**प.पू. गुरुजी का 74वां प्रागट्य दिन** *(सायं 5:00 बजे से ताड़देव मंदिर – दिल्ली में मनाया जाएगा।)*

गुणातीत समाज के आद्य सर्जक
गुरुहरि काकाजी महाराज के स्वधामगमन की रजत जयंती के अवसर पर...

4.3.2011, शुक्रवार – सायं 6:30 बजे से 72 घंटे की अखंड परिक्रमा प्रारंभ होगी

एवं

7.3.2011, सोमवार – सायं 6:30 बजे पूर्णाहुति होने के बाद **7:00 से 9:00 भजन संध्या** होगी।

R.N.I. 28971/ 77
Air Mail
'**Bhagwatkripa**' Bimonthly Magazine – Despatched on 15th of alternate months
If undelivered please return to :— *Printer, Publisher, Editor :* **SHRI PRABHAKER RAO *FOR* YOGI DIVINE SOCIETY- DELHI**
'Taad-dev', Kakaji Lane, Swaminarayan Marg, Ashok Vihar-III, Delhi-110 052 (India) Tel.: 2730 1327
Printed at : **D.K. FINE ART PRESS (P) LTD.,** A 6, Community Centre, Nimri Colony, DELHI-110 052